



2026:AHC:62343-DB

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

रिट - सी संख्या - 19612 वर्ष 2018

ए.एफ.आर.

आरक्षित दिनांक : 24.11.2025

प्रदत्त दिनांक : 25.03.2026

कुंभा करण.....याचिकाकर्ता(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं 2 अन्य.....प्रतिवादी(गण)

याचिकाकर्ता(गण) के अधिवक्ता :धीरज श्रीवास्तव, राज करण यादव, यदवेन्द्र कुमार यादव

प्रतिवादी(गण) के अधिवक्ता :सी.एस.सी., राज मोहन उपाध्याय, राम राज सिंह

एवं अन्य सम्बद्ध वाद

माननीय न्यायमूर्ति सरल श्रीवास्तव

माननीय न्यायमूर्ति सुधांशु चौहान

(माननीय न्यायमूर्ति श्री सुधांशु चौहान द्वारा प्रदत्त)

1. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री राज करण यादव, प्रयागराज विकास प्राधिकरण के विद्वान अधिवक्ता श्री अभिनव कृष्ण श्रीवास्तव द्वारा सहायतार्थ विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री एम.सी. चतुर्वेदी और राज्य की ओर से विद्वान मुख्य स्थायी अधिवक्ता द्वितीय श्री राजेश्वर त्रिपाठी को सुना गया।

2. ये सभी रिट याचिकाएं शहरी भूमि (हदबंदी और विनियमन) अधिनियम, 1976 (जिसे आगे "अधिनियम, 1976" कहा गया है) के अंतर्गत कार्यवाही से संबंधित हैं। शहरी भूमि (हदबंदी और विनियमन) निरसन अधिनियम, 1999 (जिसे आगे "निरसन अधिनियम, 1999" कहा गया

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



है) द्वारा अधिनियम, 1976 को निरस्त कर दिया गया था और निरसन अधिनियम, 1999 उत्तर प्रदेश राज्य में 18.03.1999 को लागू हुआ था। सभी रिट याचिकाएं तत्कालीन जिला इलाहाबाद, जो अब प्रयागराज है, से संबंधित हैं। विवाद की समानता और मतभेद की समरूपता को देखते हुए, इन रिट याचिकाओं का निपटारा इस एक ही निर्णय और आदेश द्वारा किया जा रहा है। इन रिट याचिकाओं में से, रिट-सी संख्या 19612/2018 (कम्भा करण बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) प्रमुख मामला है, लेकिन सभी रिट याचिकाओं के प्रासंगिक तथ्यात्मक पहलुओं को प्रमुख मामले के तथ्यों के साथ संक्षेप में नीचे दिया गया है;

(3.1) रिट-सी संख्या 19612/2018 (कम्भा करण बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य)

(क) इस रिट याचिका के माध्यम से याचिकाकर्ता ने निम्नलिखित राहतों की प्रार्थना की है:-

“(i) प्रतिवादी को दिनांक 29.9.2015 के नए सरकारी आदेश के अनुसार आवश्यक कार्रवाई करने और मामले की कार्यवाही करने और निर्णय लेने का निर्देश देने के लिए परमादेश की प्रकृति का रिट आदेश या निर्देश जारी किया जाए।

(ii) प्रतिवादियों को निरसन अधिनियम 1999 के तहत मामला संख्या पी-805/1976 (राज्य बनाम ऋषि राम) ग्राम कटका जिला इलाहाबाद की कार्यवाही समाप्त करने का निर्देश देने के लिए परमादेश की प्रकृति का रिट आदेश या निर्देश जारी किया जाए।

(iii) प्रतिवादियों को याचिकाकर्ता के नाम पर राजस्व अभिलेखों को सही करने का निर्देश देने के लिए परमादेश की प्रकृति का रिट आदेश या निर्देश जारी किया जाए।”

(ख) यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता के पिता, रिखी राम ने धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या पी-805/1976 के रूप में पंजीकृत है। इसके बाद धारा 8(3) के तहत नोटिस की तामील किए बिना, 25.02.1986 को धारा 8(4) के तहत एक आदेश पारित किया गया। 02.08.1996 को धारा 10(5) के तहत एक नोटिस जारी किया गया। आगे यह दावा किया गया है कि प्रतिवादियों ने धारा 10(6) के तहत विवादित भूमि का कब्जा

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



लेने के लिए कोई कदम नहीं उठाया और याचिकाकर्ता विवादित भूमि पर वास्तविक कब्जे में है। रिखी राम का निधन हो गया और वे अपने पीछे कम्भा करण याचिकाकर्ता, जिया लाल, कन्हैया लाल और धर्मराज, अपने पुत्रों और वैधानिक वारिसों को छोड़ गए। यह भी दावा किया गया है कि यह रिट याचिका प्रतिवादियों द्वारा सरकारी आदेशों, विशेषकर 29.09.2015 के सरकारी आदेश में निहित निर्देशों का पालन न करने के खिलाफ दायर की जा रही है।

(ग) आगे यह दावा किया गया है कि राम खेलावां के पुत्र मुन्नू, जो सह-भूमिधारकों में से एक थे, ने अधिनियम, 1976 के तहत अपनी भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने के विरुद्ध रिट याचिका संख्या 30361/2010 दायर की थी और उक्त रिट याचिका को दिनांक 04.07.2013 के निर्णय और आदेश द्वारा स्वीकार कर लिया गया था। यह भी कहा गया है कि एक अन्य सह-भूमिधारक द्वारा रिट याचिका संख्या 33320/2015 (बाबा लाल बनाम राज्य) दायर की गई थी और इसे 19.12.2017 को स्वीकार कर लिया गया था।

(घ) प्रतिवादियों ने इसके विपरीत कहा है कि अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही में रिखी राम ने धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी। इसके बाद, दिनांक 31.03.1985 को धारा 8(3) के तहत नोटिस जारी किया गया और उसे 14.02.1986 को तामील किया गया। चूंकि मूल भूमिधारक द्वारा कोई आपत्ति दर्ज नहीं की गई थी, इसलिए धारा 8(4) के तहत दिनांक 25.02.1986 को आदेश पारित किया गया। इसके बाद, धारा 9 के तहत अंतिम वक्तव्य दिनांक 24.02.1987 को जारी किया गया। आगे यह भी कहा गया है कि धारा 10(1) और धारा 10(3) के तहत अधिसूचनाएं क्रमशः 14.07.1986 और 5.7.1996 को राज्य राजपत्र में प्रकाशित की गईं। इसके बाद, धारा 10(5) के तहत स्वैच्छिक रूप से कब्जा सौंपने के लिए नोटिस दिनांक 02.08.1996 को जारी किया गया। इसके अनुसरण में, विवादित भूमि फसली वर्ष 1402-1407 (जो वर्ष 1995-2000 के अनुरूप है) के दौरान राज्य सरकार के नाम पर दर्ज की गई। इसके अलावा, दिनांक 11.12.1996 के सरकारी आदेश के मद्देनजर, विवादित भूमि का कब्जा तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दिया गया। अधिनियम, 1976 की धारा 11(8) के तहत नोटिस जारी किए जो रिखी राम के पुत्र जिया लाल

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



को विधिवत तामील किए गए थे। याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत राजस्व अभिलेखों के अनुसार बाबा लाल याचिकाकर्ता के सह-भूमिधारक नहीं थे। इलाहाबाद की महायोजना में रिक्त भूमि को आवासीय प्रयोजन के लिए सीमांकित किया गया है। रिट याचिका को केवल इस आधार पर खारिज किया जाना चाहिए कि भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने की तिथि से 32 वर्ष की देरी के बाद इसे दायर किया गया है। मूल भूमिधारक रिखी राम ने अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही को कभी चुनौती नहीं दी। अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही, निरसन अधिनियम, 1999 के लागू होने से पहले ही अंतिम रूप ले चुकी थी।

(ड) याचिकाकर्ता ने प्रतिवादियों के जवाब में कहा है कि अधिनियम, 1976 की धारा 10(4) और 10(5) के तहत कार्यवाही एक मृत व्यक्ति के विरुद्ध है। अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही और विवादित भूमि के राज्य के नाम पर दर्ज होने के संबंध में राज्य के तर्कों पर कोई खास से विवाद नहीं किया गया है, लेकिन साथ ही यह भी कहा गया है कि अधिनियम, 1976 की धारा 10(6) के तहत कोई कार्यवाही नहीं हुई है और याचिकाकर्ता अभी भी खाली भूमि पर भौतिक कब्जे में है और उस पर कृषि गतिविधियाँ कर रहा है। याचिकाकर्ता ने विवादित भूमि पर अपने कब्जे को साबित करने के लिए कुछ राजस्व अभिलेख और तस्वीरें प्रस्तुत की हैं।

(च) यहाँ यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि उपरोक्त पृष्ठभूमि में याचिकाकर्ता ने दिनांक 03.02.2022 को एक पूरक हलफनामा दाखिल किया है और रिखी राम का मृत्यु प्रमाण पत्र प्रस्तुत किया है जिसमें उनकी मृत्यु की तिथि 22.03.2006 बताई गई है। यह तथ्य याचिकाकर्ता के इस दावे के विपरीत है कि रिखी राम की मृत्यु अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही के दौरान हुई थी।

(छ) संबंधित पक्षों द्वारा अपने अभिवेदनों में लगाए गए आरोपों की पुष्टि करने के लिए हमने मामले के मूल अभिलेखों को तलब किया और अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही के

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



संबंध में प्रतिवादियों द्वारा बताए गए तथ्य काफी हद तक सही पाए गए। अभिलेखों से यह भी पता चलता है कि किसी भी समय धारा 10(6) के तहत कोई नोटिस जारी नहीं किया गया था।

(3.2) रिट-सी संख्या 8237 वर्ष 2017 (स्वर्गीय राजेंद्र प्रसाद, कानूनी वारिसों सहित,

बनाम राज्य और अन्य)

(क) यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता ने धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो के-2299 वर्ष 1976 के रूप में पंजीकृत है। इसके बाद, याचिकाकर्ता को धारा 8(3) के तहत नोटिस तामील नहीं किया गया और धारा 8(4) के तहत एकतरफा आदेश पारित किया गया। याचिकाकर्ता को धारा 10(5) के तहत नोटिस भी तामील नहीं किया गया। यह स्वीकार किया गया है कि राजस्व अभिलेखों में भूमि राज्य के नाम पर दर्ज है। हालांकि, याचिकाकर्ता विवादित भूमि पर अपना कब्जा बनाए हुए है। यह भी दावा किया गया है कि भूमि माफिया विवादित भूमि को हदबंदी भूमि बताकर याचिकाकर्ता के कब्जे में हस्तक्षेप कर रहे हैं। इसके अलावा, याचिकाकर्ता ने दिनांक 29.09.2015 के सरकारी आदेश का लाभ भी मांगा है। रिट याचिका के साथ दाखिल किए गए हदबंदी विवरणी से पता चलता है कि इसे राजजन उर्फ राजभवन ने दाखिल किया है। याचिकाकर्ता ने खतौनी संलग्न किए हैं, लेकिन इस संबंध में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है कि भूमि का कौन सा भाग अधिशेष घोषित किया गया है और राज्य के नाम पर दर्ज है तथा शेष भूमि का कौन सा भाग याचिकाकर्ता के नाम पर दर्ज है। इसके अलावा, याचिकाकर्ता ने अपने कब्जे के समर्थन में तस्वीरें भी प्रस्तुत की हैं।

(ख) प्रतिवादियों ने इसके जवाब में कहा है कि राजजन उर्फ राजभवन ने हदबंदी विवरणी दाखिल की थी और इसे हदबंदी वाद संख्या के 2298/1976 (राज्य बनाम राजजन उर्फ राजभवन) के रूप में पंजीकृत किया गया था। यह भी कहा गया है कि महादेव के पुत्र स्वर्गीय राजजन उर्फ राजभवन के वंशजों में उनकी पत्नी निर्मला देवी और पुत्र कोनार्क, चाणक्य, कनिष्क और अमित शामिल थे। इस प्रकार, याचिकाकर्ता का हदबंदी निर्धारण मामले से कोई संबंध नहीं है। धारा 8(3) के तहत नोटिस 31.01.1984 को जारी किया गया था। हालांकि, कोई आपत्ति दर्ज न होने

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



के कारण धारा 8(4) के तहत आदेश 04.11.1985 को पारित किया गया। इसके बाद, धारा 9 के तहत अंतिम विवरण जारी किया गया। धारा 10(1) और 10(3) के तहत अधिसूचनाएं क्रमशः 29.05.1988 और 14.04.1990 को राज्य राजपत्र में प्रकाशित की गईं। विवादित भूमि का कब्जा सौंपने के लिए धारा 10(5) के तहत नोटिस 29.09.1993 को जारी किया गया। इसके बाद, राजस्व अभिलेखों में भूमि का राज्य के नाम पर उत्पत्तिवर्तन किया गया और कब्जा तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दिया गया।

(3.3) रिट-सी संख्या 8238 वर्ष 2017 (जमुना प्रसाद और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य)

(क) यह कहा गया है कि भूमि के मूल भूमि-धारक राम जतन का निधन हो गया और वे अपने पीछे तीन पुत्र छोड़ गए: जमुना प्रसाद-याचिकाकर्ता संख्या 1, विजय कुमार-याचिकाकर्ता संख्या 2 और संगम। बाद में संगम का भी निधन हो गया और वे अपनी विधवा श्रीमती विमला देवी-याचिकाकर्ता संख्या 4 और नाबालिग पुत्र निरंजन सिंह-याचिकाकर्ता संख्या 3 को छोड़ गए। राम जतन ने अपने जीवनकाल में धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या पी-353/1976 के रूप में पंजीकृत है। बाद में 30.12.1985 को धारा 8(4) के तहत एकतरफा आदेश पारित किया गया। धारा 10(5) के तहत 26.12.1987 को नोटिस जारी किया गया था, लेकिन उसे तामील नहीं किया गया। याचिकाकर्ता विवादित भूमि पर अभी भी अपना कब्जा बनाए हुए हैं और अधिनियम, 1976 की धारा 10(6) के तहत कोई कार्यवाही नहीं हुई है। दिनांक 29.09.2015 के सरकारी आदेश पर भी भरोसा जताया गया है। आरोप है कि भूमि माफिया ने याचिकाकर्ताओं के कब्जे में हस्तक्षेप करना शुरू कर दिया था। याचिकाकर्ताओं ने अपने मामले के समर्थन में राजस्व अभिलेख, बिजली बिल और भूमि के भौगोलिक निर्देशांक दर्शाने वाली तस्वीरें प्रस्तुत की हैं।

(ख) प्रतिवादियों का तर्क है कि राम जतन ने अधिनियम, 1976 की धारा 6(1) के तहत अधिकतम मूल्यहास विवरणी दाखिल की थी। धारा 8(3) के तहत नोटिस 15.12.1985 को जारी

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



किया गया था और राम जतन को 23.12.1985 को तामील कराया गया था। हालांकि, कोई आपत्ति दर्ज न होने के कारण, धारा 8(4) के तहत 30.12.1985 को एक आदेश पारित किया गया था। इसके बाद धारा 10(1) और धारा 10(3) के तहत अधिसूचना क्रमशः 30.12.1995 और 7.6.1997 को राज्य राजपत्र में प्रकाशित की गई। भूमि का कब्जा सौंपने के लिए धारा 10(5) के तहत नोटिस 26.12.1997 को जारी किया गया। इसके अनुसरण में, फसली वर्ष 1402-1407 में भूमि राज्य के नाम पर दर्ज की गई और तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दी गई। इसके बाद मुआवजे/संदेय धनराशि के निर्धारण के लिए धारा 11(8) के तहत नोटिस 24.01.1998 को जारी किया गया और राम जतन की पुत्री श्रीमती निर्मला को 14.02.1998 को तामील कराया गया। राम जतन ने धारा 11(8) के तहत नोटिस के विरुद्ध 23.02.1998 को आपत्ति दर्ज कराई, लेकिन 13.08.1998 को इसे खारिज कर दिया गया। याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत राजस्व अभिलेख, अधिनियम, 1976 के अंतर्गत विवादित भूमि से संबंधित नहीं हैं। भूमि का कब्जा सौंपे जाने की तिथि से 19 वर्ष की देरी के बाद रिट याचिका दायर की गई है।

(3.4) रिट-सी संख्या 8242 वर्ष 2017 (रामदेव और अन्य बनाम राज्य और अन्य)

(क) यह रिट याचिका रामदेव पुत्र दीना नाथ, अमृत लाल पुत्र माइकू लाल और शिवबरन पुत्र गंभीर द्वारा दायर की गई है।

(ख) यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता संख्या 1 रामदेव के पिता दीना नाथ ने धारा 6(1) के अंतर्गत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या पी-1510/1976 (राज्य बनाम दीना नाथ) के रूप में पंजीकृत है। इसके बाद धारा 8(3) के अंतर्गत कोई नोटिस तामील नहीं किया गया और धारा 8(4) के अंतर्गत आदेश 30.10.1984 को पारित किया गया। धारा 10(5) के अंतर्गत कोई नोटिस तामील नहीं किया गया। दीना नाथ का देहांत हो गया और वे अपने पीछे तीन पुत्र रामदेव, बलदेव और बजरंग छोड़ गए।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(ग) आगे कहा गया है कि नानकू और हीरा ने धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या पी-1450/1976 के रूप में पंजीकृत है। इसके अलावा, गंभीर के पुत्र शिवबरन-याचिकाकर्ता संख्या 3 ने भी धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी। याचिकाकर्ता संख्या 3 को धारा 8(3) और 10(5) के तहत कोई नोटिस नहीं दिया गया था।

(घ) यह भी कहा गया है कि माइकू लाल ने धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या पी-1527/1976 (राज्य बनाम माइकू लाल) के रूप में पंजीकृत है। धारा 8(3) के तहत कोई नोटिस नहीं दिया गया था और धारा 8(4) के तहत आदेश 23.09.1983 को पारित किया गया था। धारा 10(5) के तहत कोई नोटिस नहीं दिया गया था।

(ङ) याचिकाकर्ताओं के पास खाली जमीन का कब्जा था। इसके अलावा, भूमि माफिया याचिकाकर्ताओं के कब्जे में हस्तक्षेप कर रहे थे। याचिकाकर्ताओं ने 2 अप्रैल, 1994 के सरकारी आदेश का लाभ उठाने का दावा किया है, जिसके तहत कृषि भूमि के संबंध में अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही रोक दी गई थी। याचिकाकर्ताओं ने अपने दावों के समर्थन में समेकन अधिनियम, 1953 के तहत जारी सीएच प्रपत्र 23 प्रस्तुत किया है, हालांकि, इसमें दर्शाया गया है कि भूमि राज्य-सक्षम प्राधिकारी (शहरी सीमा) के नाम पर दर्ज है। इसके अलावा, याचिकाकर्ताओं ने बिजली के बिल और तस्वीरें भी प्रस्तुत की हैं।

(च) प्रतिवादियों ने इसके जवाब में कहा है कि दीना नाथ ने हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी मामला संख्या पी-1510/1976 के रूप में पंजीकृत है। मूल भूमिधारक दीना नाथ को धारा 8(3) के तहत नोटिस 20 अक्टूबर, 1984 को तामील किया गया था। हालांकि कोई आपत्ति दर्ज नहीं की गई, इसलिए धारा 8(4) के तहत आदेश 14.11.1984 को पारित किया गया। धारा 9 के तहत अंतिम विवरण 08.05.1987 को जारी किया गया। धारा 10(1) और 10(3) के तहत अधिसूचनाएं क्रमशः 10.03.1990 और 14.02.1996 को राज्य राजपत्र में प्रकाशित की गईं। धारा 10(5) के तहत नोटिस 22.04.1996 को जारी किया गया और दीना

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



नाथ के पुत्र बलदेव को 23.08.1996 को तामील कराया गया। इसके बाद, भूमि राज्य सरकार के नाम पर दर्ज की गई और विवादित भूमि का कब्जा तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दिया गया।

(छ) आगे कहा गया है कि याचिकाकर्ता संख्या 2 के पिता माइकू लाल, गंभीर के पुत्र ने हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या 1527/1976 के रूप में पंजीकृत है। इसके बाद, धारा 8(3) के तहत नोटिस 13.03.1981 को जारी किया गया और 01.04.1981 को माइकू लाल को तामील कराया गया। हालांकि, कोई आपत्ति दर्ज न होने के कारण, धारा 8(4) के तहत आदेश 23.09.1982 को पारित किया गया। धारा 9 के तहत अंतिम विवरण 19.08.1985 को जारी किया गया और माइकू लाल के पुत्र मेवा लाल को तामील कराया गया। धारा 10(1) और 10(3) के तहत अधिसूचनाएं क्रमशः 05.12.1987 और 24.02.1996 को राज्य राजपत्र में प्रकाशित की गईं। कब्जा सौंपने के लिए धारा 10(5) के तहत नोटिस 27.04.1996 को जारी किया गया। इसके बाद, राजस्व अभिलेखों में रिक्त भूमि राज्य के नाम पर दर्ज की गई और तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दी गई।

(ज) यह भी कहा गया है कि अंगानु के पुत्र ननकू, हीरा और पचई ने हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या पी-1460/1976 के रूप में पंजीकृत है। इसके बाद धारा 8(3) के तहत नोटिस जारी किया गया और तामील किया गया। कोई आपत्ति दर्ज न होने के कारण, धारा 8(4) के तहत आदेश 05.10.1981 को पारित किया गया। धारा 9 के तहत अंतिम विवरण जारी किया गया। धारा 10(1) और 10(3) के तहत अधिसूचनाएँ क्रमशः 14.07.1986 और 06.07.1996 को राज्य राजपत्र में प्रकाशित की गईं। धारा 10(5) के तहत नोटिस 02.08.1996 को जारी किया गया। राजस्व अभिलेखों में रिक्त भूमि राज्य के नाम पर दर्ज की गई और तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दी गई।

(झ) इसके अलावा, हदबंदी वाद संख्या पी-1510/1976 याचिकाकर्ता संख्या 1 से संबंधित है। हदबंदी वाद संख्या पी-1527/1976 याचिकाकर्ता संख्या 2 से संबंधित है। हालांकि,

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



हदबंदी वाद संख्या पी-1450/1976 के संबंध में यह समझना मुश्किल है कि यह किसी भी याचिकाकर्ता से कैसे संबंधित है और न ही इसके समर्थन में कोई दलीलें हैं।

(3.5) रिट-सी संख्या 26381 वर्ष 2017 (बृज लाल बनाम राज्य और अन्य)

(क) यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता के दादा महादेव ने धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या पी-531/1976 के रूप में पंजीकृत है। इसके बाद धारा 10(3) और धारा 10(5) के तहत कार्यवाही पूरी की गई। महादेव का निधन हो गया और वे अपने पीछे पुत्र शारदा प्रसाद को छोड़ गए। बाद में, शारदा प्रसाद का भी निधन हो गया और वे अपने पीछे दो पुत्र (याचिकाकर्ता) इंद्रराज और बृज लाल को छोड़ गए।

(ख) यह भी कहा गया है कि महादेव के भाई रामाधीन के पुत्र सहदेव ने भी हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या पी-542/1976 के रूप में पंजीकृत है। सहदेव का देहांत धारा 8(4) के तहत आदेश पारित होने से पहले हो गया था। धारा 10(5) के तहत नोटिस 14.10.1997 को जारी किया गया था, लेकिन याचिकाकर्ता को तामील नहीं कराया गया। आगे कहा गया है कि सहदेव अविवाहित थे और उनके निधन के बाद, भूमि याचिकाकर्ता के पिता शारदा प्रसाद को प्राप्त हुई।

(ग) कहा गया है कि खाली भूमि का कब्जा याचिकाकर्ता के पास बना हुआ है। याचिकाकर्ता ने दोनों हदबंदी मामलों में शामिल भूमि के संबंध में राहत की मांग की है। याचिकाकर्ता ने राजस्व अभिलेख प्रस्तुत किए हैं, लेकिन इस संबंध में कोई दलील नहीं है कि क्या ये अभिलेख एक ही भूमि से संबंधित हैं। जो अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही का हिस्सा था या हदबंदी निर्धारण से बाहर रह गई शेष भूमि से संबंधित है। इसके अलावा याचिकाकर्ता ने बिजली के बिल और भूमि के भौगोलिक निर्देशांक दर्शाने वाली तस्वीरें भी प्रस्तुत की हैं।

(घ) प्रतिवादियों ने इसके जवाब में यह स्वीकार किया है कि सहदेव ने अधिनियम, 1976 की धारा 6(1) के तहत हदबंदी निर्धारण विवरणी दाखिल की थी। इसके बाद 22.1.1979

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



को धारा 8(3) के तहत नोटिस जारी किया गया और तामील किया गया। कोई आपत्ति दर्ज न होने पर 22.2.1985 को धारा 8(4) के तहत आदेश पारित किया गया। इसके बाद 19.6.1986 को धारा 9 के तहत अंतिम विवरण जारी किया गया। धारा 10(1) और धारा 10(3) के तहत अधिसूचनाएं क्रमशः 11.11.1995 और 7.6.1997 को राज्य राजपत्र में प्रकाशित की गईं। भूमि का कब्जा सौंपने के लिए धारा 10(5) के तहत नोटिस 14.10.1997 को जारी किया गया। धारा 11(8) के तहत संदेय धनराशि/मुआवजे के लिए नोटिस 05.02.1998 को जारी किया गया था, लेकिन कोई आपत्ति दर्ज नहीं की गई। इसके अलावा, खाली जमीनों में से एक भूखंड त्रिवेणीपुरम आवास योजना, तत्कालीन इलाहाबाद में आता है।

(ड) इसके अलावा, शारदा प्रसाद ने धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, न कि शारदा प्रसाद के पिता महादेव ने। धारा 8(3) के तहत नोटिस 25.11.1981 को जारी किया गया था और मूल भूमिधारक को 29.12.1981 को तामील कराया गया था। कोई आपत्ति दर्ज न होने के कारण, धारा 8(4) के तहत आदेश 01.10.1984 को जारी किया गया था। इसके बाद, धारा 9 के तहत अंतिम विवरण जारी किया गया और धारा 10(1) और धारा 10(3) के तहत अधिसूचनाएं क्रमशः 14.07.1986 और 04.03.1995 को राज्य राजपत्र में प्रकाशित की गईं। इसके बाद धारा 10(5) के तहत कब्जा सौंपने का नोटिस जारी किया गया। भूमि का कब्जा तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दिया गया।

(च) यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि हदबंदी वाद संख्या पीP542/1976 और हदबंदी वाद संख्या पी-531/1976 से उत्पन्न दो अन्य रिट याचिकाएं पहले ही इस न्यायालय के समक्ष दायर की जा चुकी हैं, जो कि रिट याचिका संख्या 6765/2018 (मेवा लाल यादव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) और रिट याचिका संख्या 26382/2017 (प्रमोद कुमार पांडे बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) हैं। समान हदबंदी मामलों से उत्पन्न अन्य रिट याचिकाओं को दायर करने के संबंध में तथ्य विवादित नहीं है।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(3.6) रिट सी याचिका संख्या 6765 वर्ष 2018 (मेवा लाल यादव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य)

(क) यह कहा गया है कि मूल भूमि-धारक महादेव ने वाद संख्या 531/76 के रूप में पंजीकृत हदबंदी निर्धारण विवरणी दाखिल की थी और महादेव के सगे भाई सहदेव ने वाद संख्या 542/76 के रूप में पंजीकृत हदबंदी निर्धारण विवरणी दाखिल की थी। सहदेव और महादेव का देहांत हो गया और वे अपने पीछे दो पुत्र, बृज लाल और इंद्रराज, जो महादेव के पुत्र शारदा प्रसाद के पुत्र हैं, छोड़ गए। हदबंदी निर्धारण कार्यवाही में संपत्ति का वास्तविक कब्जा नहीं लिया गया था और दोनों मामलों में धारा 10 (6) के तहत कोई कार्यवाही नहीं हुई थी। याचिकाकर्ता ने 24.07.2004 को अभिलेखीय स्वामी शिव भान यादव से 419.21 वर्ग गज क्षेत्रफल वाला गटा संख्या 120 खरीदा था। याचिकाकर्ता ने विकास प्राधिकरण के समक्ष एक नक्शा प्रस्तुत किया था, लेकिन उसे 28.06.2016 को इस आधार पर मामला खारिज कर दिया गया था कि भूमि हदबंदी वाली भूमि है। हालांकि राजस्व अभिलेखों में भूमि राज्य के नाम पर दर्ज है, लेकिन याचिकाकर्ता का उस पर कब्जा है। एक ही भूखंड के विभिन्न क्षेत्रों के खरीदारों ने रिट याचिकाएं दायर की थीं, रिट-सी संख्या 9074/2013 (डॉ. श्याम कार्तिकेय द्विवेदी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) और रिट सी संख्या 17220/2009 (डॉ. कैलाश नाथ गुप्ता और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य), जिन्हें क्रमशः 15.07.2014 और 16.07.2015 के निर्णयों और आदेशों द्वारा स्वीकार कर लिया गया था। याचिकाकर्ता ने आगे आरोप लगाया है कि भूमि माफिया उसके कब्जे में हस्तक्षेप कर रहे हैं और उसने 29.09.2015 के सरकारी आदेश का लाभ की मांग की है। इसलिए, याचिकाकर्ता ने अन्य लोगों के साथ, हदबंदी मामला संख्या पी-542/76 को समाप्त करने की मांग की है, जो सहदेव की भूमि से संबंधित है। याचिकाकर्ता विवादित भूमि पर कब्जे का दावा तो करता है, लेकिन उसने इसके समर्थन में कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है।

(ख) प्रतिवादियों ने इसके जवाब में कहा है कि मूल भूमिधारी सहदेव ने हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या पी-542/1976 (राज्य बनाम सहदेव) के रूप में पंजीकृत

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



है। इसके बाद धारा 8(3) के तहत 22.10.1976 को नोटिस जारी किया गया और भूमिधारक को तामील कराया गया। कोई आपत्ति दर्ज न होने पर धारा 8(4) के तहत 22.02.1985 को आदेश पारित किया गया। अंतिम बंदोबस्ती का नोटिस धारा 9 के तहत 19.06.1986 को जारी किया गया। धारा 10(1) और धारा 10(3) के तहत अधिसूचनाएं क्रमशः 11.11.1995 और 07.06.1997 को राज्य राजपत्र में प्रकाशित की गईं। इसके बाद धारा 10(5) के तहत स्वैच्छिक रूप से कब्जा सौंपने का नोटिस 14.10.1997 को जारी किया गया। इसके बाद भूमि राज्य के नाम पर दर्ज की गई और उसका कब्जा तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दिया गया। आगे यह तर्क दिया गया है कि हदबंदी वाद संख्या पी-542/1976 (राज्य बनाम सहदेव) और हदबंदी वाद संख्या पी-531/1976 से उत्पन्न दो और रिट याचिकाएं, जिनकी रिट संख्या 26381/2017 (बृज लाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) और रिट संख्या 26382/2017 (प्रमोद कुमार पांडे और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) है, इस न्यायालय के समक्ष लंबित हैं।

(3.7) रिट सी याचिका संख्या 6926/2016 (स्वर्गीय मोहिब उल्लाह, कानूनी वारिसों के माध्यम से, बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य)

(क) यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता ने हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या 1095/1976 (राज्य बनाम मोहिब उल्लाह) के रूप में पंजीकृत है। धारा 10(5) के तहत नोटिस 28.03.1979 को जारी किया गया था, लेकिन याचिकाकर्ता को तामील नहीं कराया गया। प्रतिवादियों ने विवादित भूमि पर कभी कब्जा नहीं लिया। यह स्वीकार किया जाता है कि राजस्व अभिलेखों में राज्य का नाम दर्ज है। यह कहा गया है कि धारा 8(4) के तहत पारित अवैध आदेश के आधार पर सक्षम प्राधिकारी ने धारा 10(3) के तहत आगे की कार्यवाही की है, लेकिन धारा 10(5) और धारा 10(6) के तहत कब्जा नहीं लिया गया है। भूमि माफिया याचिकाकर्ता के कब्जे में हस्तक्षेप कर रहे थे। इसके अलावा, याचिकाकर्ता 29.09.2015 के सरकारी आदेश का लाभ भी मांगता है। याचिकाकर्ता ने विवादित भूमि पर अपने कब्जे के दावे

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



के समर्थन में गटा संख्या 14 एम की फसली 1427 का खसरा और तस्वीरें दाखिल की हैं। याचिकाकर्ता का निधन रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान 19.03.2017 को हो गया।

(ख) यह बताया गया है कि प्रतिवादियों की ओर से विवाद के गुण-दोष पर कोई प्रभावी जवाब नहीं दिया गया है और यह कहा गया है कि संबंधित हदबंदी मामले के अभिलेख उपलब्ध नहीं हैं। हालांकि, यह तर्क दिया गया है कि वर्तमान मामले के तथ्य इस याचिका समूह में अन्य मामलों के समान हैं। इसके अलावा, रिट याचिका को केवल विलंब के आधार पर खारिज किया जाना चाहिए, क्योंकि स्वैच्छिक कब्जा वर्ष 1979 में सौंपा गया था और रिट याचिका उसके 37 वर्ष बाद वर्ष 2016 में दायर की गई थी।

(3.8) रिट-सी याचिका संख्या 6679/2018 (राम सुमेर बनाम राज्य एवं अन्य)

(क) यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता के दादा महादेव ने धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या 1751/1976 के रूप में पंजीकृत है। दिनांक 03.11.1982 को धारा 8(4) के तहत एकतरफा आदेश पारित किया गया था। धारा 10(5) के तहत 13.02.1990 को नोटिस जारी किया गया था, लेकिन अधिनियम, 1976 के तहत कोई और कार्यवाही नहीं हुई और याचिकाकर्ता अभी भी खाली जमीन पर भौतिक कब्जे में है। यह भी कहा गया है कि महादेव का देहांत हो गया और वे अपने पीछे तीन पुत्र, हीरा लाल, मोहन लाल और बच्चा लाल छोड़ गए। वर्तमान रिट याचिका में एकमात्र याचिकाकर्ता हीरा लाल के पुत्र राम सुमेर हैं। यह भी स्वीकार किया गया है कि राजस्व अभिलेखों में भूमि राज्य के नाम पर दर्ज है। निरसन अधिनियम, 1999 के अनुसरण में जारी दिनांक 09.02.2000 के सरकारी आदेश और दिनांक 29.09.2015 के सरकारी आदेश पर भरोसा किया गया है। यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता ने अन्य सह-भूमिधियों, अर्थात् मोहन लाल और बच्चा लाल के साथ, सक्षम प्राधिकारी के समक्ष दिनांक 26.06.2017 को एक अभ्यावेदन प्रस्तुत किया था, लेकिन इसका कोई लाभ नहीं हुआ। इसके अलावा, याचिकाकर्ता ने खसरा भूखंड संख्या 470M के संबंध में खतौनी और भूमि के भू-निर्देशांक दर्शाने वाली तस्वीरें प्रस्तुत की हैं।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(ख) प्रतिवादियों ने इसके जवाब में यह तथ्य स्वीकार किया है कि अधिनियम, 1976 की धारा 6(1) के तहत महादेव द्वारा हदबंदी विवरणी को दाखिल किया गया था। इसके बाद, दिनांक 31.03.1981 का नोटिस को मूल भूमिधारक महादेव को धारा 8(3) के तहत 22.04.1981 को तामील कराया गया था। हालांकि, कोई आपत्ति दर्ज न होने के कारण, धारा 8(4) के तहत 03.11.1982 को एक आदेश पारित किया गया। धारा 9 के तहत अंतिम विवरण 25.01.1985 को जारी किया गया और मूल भूमिधारक महादेव को तामील कराया गया। धारा 10(1) और 10(3) के तहत अधिसूचनाएं क्रमशः 01.03.1986 और 18.09.1986 को राज्य राजपत्र में प्रकाशित की गईं। इसके बाद, धारा 10(5) के तहत नोटिस 15.02.1990 को जारी किया गया और इसे मूल भूमिधारक को 16.02.1990 को तामील कराया गया। जिन राजस्व अभिलेखों पर भरोसा किया गया है, वे अधिनियम, 1976 के अंतर्गत भूमि से संबंधित नहीं हैं। इसके अनुसरण में, राजस्व अभिलेखों में भूमि राज्य के नाम पर दर्ज की गई और तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दी गई।

(9) रिट-सी संख्या 6701/2018 (राम अवध बनाम राज्य और अन्य)

(क) यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता के पिता, बच्चा लाल ने धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या के-1759/1976 के रूप में पंजीकृत है। इसके बाद, धारा 8(3) के तहत बिना किसी नोटिस की तामील के, धारा 8(4) के तहत दिनांक 05.10.1982 को एकतरफा आदेश पारित किया गया। धारा 10(5) के तहत नोटिस 22.05.1996 को जारी किया गया और इसके बाद अधिनियम, 1976 के तहत कोई और कार्यवाही नहीं हुई। याचिकाकर्ता के पिता का निधन हो गया और वे अपनी पत्नी श्रीमती राम सावरी और याचिकाकर्ता को अपने कानूनी वारिस के रूप में छोड़ गए। यह स्वीकार किया जाता है कि विवादित भूमि राज्य के नाम पर दर्ज है, लेकिन यह भी कहा गया है कि याचिकाकर्ता विवादित भूमि पर अपना कब्जा बनाए हुए है। दिनांक 09.02.2000 और दिनांक 29.09.2015 के सरकारी आदेशों का हवाला दिया गया है। यह भी कहा गया है कि याचिकाकर्ता ने राजस्व अभिलेखों में सुधार के लिए दिनांक 20.06.2017 को एक अभ्यावेदन दाखिल किया था। इसके

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



अतिरिक्त, भूमि माफिया याचिकाकर्ता के कब्जे में हस्तक्षेप कर रहे थे। याचिकाकर्ता ने अपने पिता के नाम पर दर्ज खसरा भूखंड संख्या 663ए के राजस्व अभिलेखों का भी हवाला दिया है। साथ ही, याचिकाकर्ता ने भूमि के भौगोलिक निर्देशांक दर्शाने वाली तस्वीरें भी प्रस्तुत की हैं।

(ख) इसके जवाब में प्रतिवादियों ने यह स्वीकार किया है कि बच्चा लाल ने अधिनियम, 1976 की धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी। इसके बाद, 19.11.1981 को धारा 8(3) के तहत नोटिस जारी किया गया और मूल भूमिधारक के भतीजे राम पाल को 02.12.1981 को नोटिस तामील कराया गया। कोई आपत्ति दर्ज न होने पर, 05.10.1982 को धारा 8(4) के तहत आदेश पारित किया गया। इसके बाद, 30.06.1984 को धारा 9 के तहत अंतिम विवरण जारी किया गया। इसके बाद, धारा 10(1) और 10(3) के तहत अधिसूचनाएं क्रमशः 14.07.1986 और 23.03.1996 को राज्य राजपत्र में प्रकाशित की गईं। 23.05.1996 को धारा 10(5) के तहत कब्जा सौंपने का नोटिस जारी किया गया। इसके अनुसरण में, राजस्व अभिलेखों में भूमि राज्य के नाम पर दर्ज की गई और तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दी गई।

(3.10) रिट-सी संख्या 11225/2018 (राघवेंद्र कुमार यादव और अन्य बनाम राज्य और अन्य)

(क) यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता के पिता महादेव ने धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी और इसे हदबंदी वाद संख्या के 2227/1976 के रूप में पंजीकृत किया गया था। इसके बाद धारा 8(3) के तहत नोटिस तामील नहीं किया गया और धारा 8(4) के तहत आदेश 23.8.1982 को पारित किया गया। धारा 10(5) के तहत नोटिस 17.12.1986 को जारी किया गया था, लेकिन वह भी याचिकाकर्ता को तामील नहीं किया गया। महादेव का निधन वर्ष 1982 में हुआ और उनके दो पुत्र भगवत प्रसाद और मुनीम (याचिकाकर्ता संख्या 3) उत्तराधिकारी हैं। भगवत प्रसाद का भी सितंबर 2017 में निधन हो गया था, वे अपने पीछे दो बेटे छोड़ गए थे, राघवेंद्र कुमार-याचिकाकर्ता संख्या 1 और अजीत कुमार-याचिकाकर्ता संख्या 2.

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



सरकारी आदेश दिनांक 29.9.2015 का हवाला दिया गया है। यह स्वीकार किया गया है कि राजस्व अभिलेखों में भूमि राज्य सरकार के नाम पर दर्ज है। हालांकि, यह कहा गया है कि धारा 10 (6) के तहत कोई कार्यवाही नहीं हुई है और याचिकाकर्ता भूमि पर अपना कब्जा बनाए हुए हैं। इसके अलावा, भूमि माफिया ने विवादित भूमि पर याचिकाकर्ताओं के कब्जे में हस्तक्षेप करने का प्रयास किया। दिनांक 2.4.1994 के सरकारी आदेश का भी हवाला दिया गया है, जिसके माध्यम से कृषि भूमि के संबंध में अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही रोक दी गई थी।

(ख) प्रतिवादियों ने इसके उत्तर में स्वीकार किया है कि महादेव द्वारा धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल किया गया था। धारा 8(3) के तहत नोटिस 4.3.1982 को जारी किए गए थे और महादेव की पत्नी श्रीमती नानकी को विधिवत तामील किए गए थे। कोई आपत्ति दर्ज न होने पर, धारा 8(4) के तहत आदेश 23.8.1982 को पारित किया गया था। धारा 9 के तहत अंतिम विवरण 10.8.1984 को तैयार किया गया और महादेव के पुत्र भगवत प्रसाद को 12.10.1984 को तामील कराया गया, लेकिन कोई आपत्ति दर्ज नहीं की गई। धारा 10(1) और धारा 10(3) के तहत अधिसूचनाएं क्रमशः 16.11.1985 और 5.4.1986 को राज्य राजपत्र में प्रकाशित की गईं। इसके बाद, धारा 10(5) के तहत नोटिस 17.12.1986 को जारी किया गया और याचिकाकर्ता संख्या 3 मुनीम को तामील कराया गया। इसके अनुसरण में, राजस्व अभिलेखों में भूमि राज्य सरकार के नाम पर दर्ज की गई और तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दी गई।

(3.9) रिट-सी संख्या 11226/2018 (पुष्पा देवी और अन्य बनाम राज्य और अन्य)

(क) यह कहा गया है कि याचिकाकर्ताओं के पिता संकथा प्रसाद ने धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या के-2415/1976 के रूप में पंजीकृत है। इसके बाद 23.3.1981 को धारा 8(4) के तहत एकतरफा आदेश पारित किया गया। धारा 10(5) के तहत 1.1.1996 को नोटिस जारी किया गया था, लेकिन भूमिधारक को इसकी तामील नहीं कराई गई। यह कहा गया है कि धारा 10(6) के तहत कोई कार्यवाही नहीं हुई है और

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



याचिकाकर्ता विवादित भूमि पर भौतिक कब्जे में हैं। दिनांक 29.9.2015 के सरकारी आदेश और दिनांक 2.4.1994 के सरकारी आदेश का हवाला दिया गया, जिसमें कृषि भूमि के संबंध में कार्यवाही रोकने का निर्देश जारी किया गया था।

(ख) इसके जवाब में प्रतिवादियों ने स्वीकार किया कि संकथा प्रसाद ने धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी प्रस्तुत किया था। इसके बाद, 17.5.1979 को धारा 8(3) के तहत एक नोटिस जारी किया गया। हालांकि कोई आपत्ति दर्ज नहीं की गई, इसलिए धारा 8(4) के तहत 23.3.1981 को एक आदेश पारित किया गया। धारा 9 के तहत अंतिम विवरण तैयार किया गया और मूल भूमिधारक को व्यक्तिगत रूप से तामील कराया गया। इसके बाद धारा 10(1) और धारा 10(3) के तहत अधिसूचनाएं क्रमशः 22.2.1986 और 11.3.1985 को राज्य राजपत्र में प्रकाशित की गईं। धारा 10(5) के तहत नोटिस 1.1.1996 को जारी किया गया। इसके अनुसरण में विवादित भूमि राजस्व अभिलेखों में राज्य सरकार के नाम पर दर्ज की गई और तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दी गई। यह भी कहा गया है कि संकथा प्रसाद ने जिला न्यायाधीश के समक्ष अपील संख्या 959/1999 (संकथा प्रसाद बनाम उत्तर प्रदेश राज्य) के तहत अपील दायर की थी। उक्त अपील दिनांक 27.9.2008 के आदेश द्वारा खारिज कर दी गई थी।

(3.12) रिट-सी संख्या 19678/2018 (बुद्धन प्रसाद बनाम राज्य)

(क) यह कहा गया है कि महादेव के सभी पुत्र जोखू, जवाहर, हीरा और मोती विवादित भूमि के पंजीकृत भूमिधर थे। जवाहर के पुत्र दुखहरन ने धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी। इसके अलावा, महादेव के पुत्र जोखू, मोती और हीरा ने भी धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या पी-144/76 के रूप में पंजीकृत है।

(ख) धारा 8(4) के तहत एक आदेश अवैध रूप से और क्षेत्राधिकार के बिना पारित किया गया था और बाद में धारा 10(3) के तहत अधिसूचना जारी की गई थी। आगे यह भी कहा गया है कि प्रतिवादियों ने अधिनियम, 1976 की धारा 10(5) और धारा 10(6) के तहत विवादित

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



भूमि पर कब्जा नहीं लिया था। यह भी कहा गया है कि श्री दुखरन ने रिट याचिका संख्या 68563/2012 दायर की थी, जिसे 15.5.2014 के निर्णय और आदेश द्वारा स्वीकार कर लिया गया था। कुछ भूमि माफिया विवादित भूमि पर याचिकाकर्ता के कब्जे में हस्तक्षेप कर रहे थे। याचिकाकर्ता ने अपने मामले के समर्थन में अपने नाम से बिजली बिलों की प्रति और भूमि की कुछ तस्वीरें प्रस्तुत की हैं।

(ग) इसके जवाब में प्रतिवादियों ने कहा है कि महादेव के पुत्र जोखू, मोती और हीरा तथा जवाहर के पुत्र दुखरन, दोनों पक्षों ने धारा 6(1) के तहत अपनी सीमा हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी मामला संख्या पी-144/76 (राज्य बनाम जोखू और अन्य) के रूप में पंजीकृत है। दिनांक 23.3.1982 का नोटिस धारा 8(3) के अंतर्गत था और इसे दुखरन की पत्नी को व्यक्तिगत रूप से तामील कराया गया था। कोई आपत्ति दर्ज न होने पर, 13.09.1982 को धारा 8(4) के अंतर्गत आदेश पारित किया गया। इसके बाद, अधिनियम, 1976 की धारा 9 के अंतर्गत अंतिम वक्तव्य 25.2.1985 को जारी किया गया, लेकिन कोई आपत्ति दर्ज नहीं की गई। धारा 10(1) और धारा 10(3) के अंतर्गत अधिसूचना राज्य राजपत्र में प्रकाशित की गई। इसके बाद, 18.9.1992 को धारा 10(5) के अंतर्गत नोटिस जारी किया गया। धारा 10(5) के अंतर्गत अलग-अलग नोटिस जवाहर के पुत्र दुखरन और महादेव के पुत्र जोखू, मोती और हीरा को तामील कराए गए। इसके अनुसरण में, राजस्व अभिलेखों में राज्य का नाम दर्ज किया गया और भूमि को तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दिया गया। अतः, अधिनियम, 1976 के अंतर्गत कार्यवाही समाप्त हो गई। रिट-सी संख्या 68563/2012 में दिनांक 15.5.2014 को पारित आदेश के विरुद्ध समीक्षा याचिका दायर की गई है।

(घ) यह रिट याचिका जोखू के पुत्र बुद्धन प्रसाद द्वारा दायर की गई है। अभिलेख में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह सिद्ध हो कि जवाहर महादेव का पुत्र था। यह स्वीकार किया जाता है कि जवाहर के पुत्र दुखरन और महादेव के पुत्र जोखू, हीरा और मोती ने अलग-अलग हदबंदी विवरणी दाखिल किए थे और उन्हें धारा 10(5) के अंतर्गत अलग-अलग नोटिस जारी किए गए थे।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(3.13) रिट-सी संख्या 19694/2018 (देवेंद्र कुमार जायसवाल बनाम राज्य एवं अन्य)

(क) यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता के पिता शंभू नाथ ने धारा 6(1) के अंतर्गत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या है।के-2236/1976 (राज्य बनाम शंभू नाथ) के रूप में पंजीकृत है। धारा 8(3) के तहत उचित नोटिस तामील नहीं किया गया और धारा 8(4) के तहत आदेश 29.04.1985 को पारित किया गया। धारा 10(5) के तहत नोटिस 21.08.1990 को जारी किया गया था, लेकिन मूल भूमिधारक को तामील नहीं किया गया। याचिकाकर्ता के पिता, शंभू नाथ का 04.01.2006 को निधन हो गया, और याचिकाकर्ता उनके एकमात्र कानूनी उत्तराधिकारी हैं। यह स्वीकार किया जाता है कि राजस्व अभिलेखों में रिक्त भूमि राज्य के नाम पर दर्ज है। यह भी निवेदन किया जाता है कि कुछ भूमि माफियाओं ने याचिकाकर्ता के कब्जे में हस्तक्षेप करना शुरू कर दिया है। याचिकाकर्ता ने अपने दावे के समर्थन में 02.04.1994 के सरकारी आदेश का हवाला दिया है। इसके अलावा, याचिकाकर्ता ने अपने मामले के समर्थन में फसली वर्ष 1415-1420 (संबंधित वर्ष 2008-2013) के राजस्व अभिलेख प्रस्तुत किए हैं, जिनमें भूमि राज्य के नाम पर दर्ज है, बिजली बिलों की प्रति, मीटर सीलबंदी प्रमाण पत्र और भूमि के भौगोलिक निर्देशांक दर्शाने वाली तस्वीरें भी प्रस्तुत की हैं।

(ख) प्रतिवादियों ने अपने उत्तर में कहा है कि याचिकाकर्ता के पिता ने धारा 6(1) के अंतर्गत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी। इसके बाद, धारा 8(3) के अंतर्गत 22.08.1978 को नोटिस जारी किया गया, लेकिन मूल भूमिधारक ने 15.10.1978 को इसे लेने से इनकार कर दिया। कोई आपत्ति दर्ज नहीं की गई, धारा 8(4) के अंतर्गत आदेश 26.03.1981 को पारित किया गया। धारा 9 के अंतर्गत अंतिम विवरण 04.03.1983 को जारी किया गया और पंजीकृत डाक द्वारा भेजा गया। मूल भूमिधारी ने 21.03.1983 को इस पर आपत्ति दर्ज की। दाखिल की गई आपत्तियों के जवाब में मूल भूमिधारक को क्रमशः 07.01.1985 और 23.01.1985 को नोटिस जारी किए गए थे। हालांकि, नोटिस तामील होने के बावजूद मूल भूमिधारक और उनके प्रतिनिधि उपस्थित नहीं हुए और अंततः 29.04.1985 को आपत्तियां खारिज कर दी गईं। धारा 10(1) और 10(3) के तहत अधिसूचनाएं क्रमशः 16.11.1985 और 20.04.1990 को राज्य

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



राजपत्र में प्रकाशित हुई। इसके बाद, धारा 10(5) के तहत नोटिस 21.08.1990 को जारी किया गया। राजस्व अभिलेखों में राज्य का नाम दर्ज किया गया और खाली भूमि तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दी गई। धारा 11(8) के तहत संदेय धनराशि/मुआवजे के भुगतान के लिए मूल भूमिधारक को 25.03.1998 को नोटिस जारी किया गया।

(3.14) रिट-सी संख्या 19800 वर्ष 2018 (स्वर्गीय लीलावती, उनके कानूनी वारिसों सहित, बनाम राज्य और अन्य)

(क) यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता ने धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या के-2659/76 (राज्य बनाम लीलावती) के रूप में पंजीकृत है। इसके बाद याचिकाकर्ता को धारा 8(3) के तहत कोई नोटिस जारी नहीं किया गया और 19.06.1981 को धारा 8(4) के तहत याचिकाकर्ता के खिलाफ एकतरफा आदेश पारित किया गया। अधिनियम की धारा 10(5) के तहत नोटिस 21.03.1998 को जारी किया गया था, लेकिन तामील नहीं किया गया। यह स्वीकार किया जाता है कि विवादित भूमि राज्य के नाम पर दर्ज है, लेकिन याचिकाकर्ता विवादित भूमि पर कब्जा बनाए हुए है। याचिकाकर्ता 29.09.2015 के सरकारी आदेश का लाभ भी मांगता है। याचिकाकर्ता ने विवादित भूमि पर कब्जे के अपने दावे के समर्थन में फसली वर्ष 1427 (सदृश वर्ष 2020) के खसरा की प्रति प्रस्तुत की है, जिसमें प्रश्नगत भूमि राज्य के नाम पर दर्ज है, लेकिन उस पर धान और गेहूं की फसलें उगाई जा रही हैं, साथ ही भूमि के भौगोलिक निर्देशांक दर्शाने वाली तस्वीरें भी प्रस्तुत की हैं।

(ख) प्रतिवादियों ने इसके जवाब में कहा है कि याचिकाकर्ता ने धारा 6(1) के तहत अपना बयान दाखिल किया था। धारा 8(3) के तहत नोटिस 13.02.1981 को जारी किया गया था और याचिकाकर्ता को 11.04.1981 को तामील कराया गया था। याचिकाकर्ता ने कार्यवाही में अपनी आपत्तियां 05.05.1981 को दर्ज कीं, लेकिन इसके समर्थन में कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया। अंततः सक्षम प्राधिकारी द्वारा 19.06.1981 को धारा 8(4) के तहत एक आदेश पारित किया गया। अंतिम बयान के साथ धारा 9 के तहत नोटिस 20.04.1982 को जारी किया गया

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



था। इसके बाद, धारा 10(1) और 10(3) के तहत अधिसूचनाएँ क्रमशः 03.10.1993 और 05.03.1994 को राज्य राजपत्र में प्रकाशित की गईं। इसके बाद, धारा 10(5) के तहत नोटिस 21.03.1998 को जारी किया गया। इसके अनुसरण में विवादित भूमि को राजस्व अभिलेखों में राज्य के नाम पर दर्ज किया गया और तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दिया गया।

(3.15) रिट-सी संख्या 29963/2018 (राम लखन बनाम राज्य और अन्य)

(क) यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता के पिता, मेवा लाल ने धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो वाद संख्या 3181/1976 के रूप में पंजीकृत है। मेवा लाल का देहांत हो गया और उनके चार पुत्र, बृज लाल, राम लखन, जीत लाल और अमृत लाल उत्तराधिकारी हैं। याचिकाकर्ता ने अधिनियम, 1976 के अंतर्गत सक्षम प्राधिकारी के कार्यालय में पूछताछ की और दिनांक 09.01.2015 के प्रश्नावली पत्र के माध्यम से उसे सूचित किया गया कि विवादित भूमि सीमा के अंतर्गत नहीं है। याचिकाकर्ता विवादित भूमि पर भौतिक रूप से कब्जा रखता है और उसे अधिनियम, 1976 की धारा 8(4) के अंतर्गत पारित आदेश की तामील कभी नहीं कराई गई है। प्रतिवादियों ने अधिनियम, 1976 की धारा 10(5) और 10(6) के अंतर्गत विवादित भूमि का कब्जा नहीं लिया है। इसके अलावा, भूमि माफियाओं ने याचिकाकर्ता के कब्जे में हस्तक्षेप करना शुरू कर दिया है। दिनांक 02.04.1994 के सरकारी आदेश का हवाला दिय किया गया है। याचिकाकर्ता ने अपने दावे के समर्थन में भूमि के भौगोलिक निर्देशांक दर्शाने वाली तस्वीरें प्रस्तुत की हैं।

(ख) प्रतिवादियों ने इसके उत्तर में कहा है कि मेवा लाल ने अधिनियम, 1976 की धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी। इसके बाद, धारा 8(3) के तहत 17.05.1978 को नोटिस जारी किया गया और मेवा लाल के पुत्र बृज लाल को 18.07.1979 को तामील कराया गया। नोटिस तामील होने के बाद, मेवा लाल ने 03.09.1979 को आपत्तियां दर्ज कराईं, लेकिन आपत्तियों के साथ कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया गया। अंततः, सक्षम प्राधिकारी ने

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



18.12.1979 को धारा 8(4) के तहत एक आदेश पारित किया। इसके बाद, धारा 9 के तहत अंतिम विवरण 28.03.1980 को जारी किया गया और मेवा लाल की बहू श्रीमती रामवती को 15.05.1980 को तामील कराया गया। कोई आपत्ति दर्ज न होने के कारण, अधिनियम, 1976 की धारा 10(1) और 10(3) के तहत अधिसूचनाएं क्रमशः 18.07.1991 और 21.09.1991 को राज्य राजपत्र में प्रकाशित की गईं। इसके बाद, धारा 10(5) के तहत 20.10.1993 को एक नोटिस जारी किया गया। इसके अनुसार, राजस्व अभिलेखों में राज्य के नाम पर उत्परिवर्तन किया गया और भूमि को तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दिया गया।

(3.16) रिट-सी संख्या 34357/2018 (कुंवर भरत सिंह बनाम राज्य)

(क) यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता के दादा, बृज मोहन सिंह ने धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो वाद संख्या 2997/1976 के रूप में पंजीकृत है। याचिकाकर्ता के पिता का बृज मोहन सिंह के जीवनकाल में ही देहांत हो गया था। इसके बाद बृज मोहन सिंह का देहांत वर्ष 1985 में हुआ और याचिकाकर्ता का नाम 7.9.1985 के आदेश द्वारा राजस्व अभिलेखों में दर्ज किया गया। आगे यह भी कहा गया है कि धारा 10(5) के तहत नोटिस 1.6.1996 को जारी किया गया था और याचिकाकर्ता को कभी तामील नहीं कराया गया। याचिकाकर्ता ने विवादित भूमि पर अपने कब्जे के समर्थन में 26.7.1997 की किसान बही, सिंचाई विभाग द्वारा जारी रसीदें और फसल बीमा की रसीदें प्रस्तुत की हैं। याचिकाकर्ता ने फसली वर्ष 1409 (सदृश वर्ष 2002) के 27.11.2001 को जारी खसरा का हवाला दिया है, जिसमें खसरा संख्या 3 में शामिल भूमि को छोड़कर अन्य सभी भूमि राज्य के नाम पर दर्ज हैं। याचिकाकर्ता ने अपने द्वारा स्थापित नलकूप के बिजली बिल और भूमि की तस्वीरें भी प्रस्तुत की हैं।

(ख) प्रतिवादियों ने इसके जवाब में स्वीकार किया है कि बृज मोहन सिंह द्वारा धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल किया गया था। इसके बाद 14.9.1982 को धारा 8(3) के

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



तहत नोटिस जारी किया गया और 24.9.1982 को बृज मोहन सिंह के भतीजे जय करण सिंह को तामील कराया गया। हालांकि कोई आपत्ति दर्ज न होने के कारण, 17.11.1982 को धारा 8(4) के तहत आदेश पारित किया गया। 12.5.1985 को जारी धारा 9 के तहत अंतिम बयान तामील कराने का प्रयास किया गया, लेकिन याचिकाकर्ता ने इसे स्वीकार करने से इनकार कर दिया और गवाहों की उपस्थिति में इस आशय का एक पृष्ठांकन किया गया। इसके बाद धारा 10(1) और धारा 10(3) के तहत अधिसूचनाएं क्रमशः 22.3.1986 और 17.2.1996 को प्रकाशित की गईं। इसके बाद 1.6.1996 को धारा 10(5) के तहत नोटिस जारी किया गया और राज्य का नाम फसली वर्ष 1404-1409 (क्रमशः वर्ष 1997-2002) में दर्ज किया गया। यह भूमि तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दी गई थी। आगे यह भी कहा गया है कि फसली वर्ष 1425-1430 (सदृश वर्ष 2018-2023) के राजस्व अभिलेखों में विवादित भूमि भारत सरकार के रेल मंत्रालय के नाम पर दर्ज थी।

(3.17) रिट-सी संख्या 36216/2019 (मटरू बनाम राज्य और अन्य)

(क) यह कहा गया है कि विन्देश्वर के पुत्र खुशरू लाल, गोरे लाल और मानशी लाल तथा बंसी लाल के पुत्र मटरू याचिकाकर्ता ने अधिनियम, 1976 की धारा 6(1) के अंतर्गत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या 1203/1976 (राज्य बनाम खुशरू लाल और अन्य) के रूप में पंजीकृत है। याचिकाकर्ता को धारा 8(3) के अंतर्गत नोटिस तामील नहीं किया गया तथा 21.10.1981 को धारा 8(4) के अंतर्गत एकतरफा आदेश पारित किया गया। यह भी कहा गया है कि 04.03.1997 को धारा 10(5) के तहत जारी किया गया नोटिस याचिकाकर्ता को तामील नहीं कराया गया था। याचिकाकर्ता ने रिट याचिका में 02.04.1994 के सरकारी आदेश का लाभ मांगा है। विवादित भूमि का कब्जा धारा 10(6) के तहत नहीं लिया गया था। इसके अलावा, याचिकाकर्ता 29.09.2015 के सरकारी आदेश का लाभ भी मांगता है। अपने मामले के समर्थन में, याचिकाकर्ता ने कुछ राजस्व अभिलेख प्रस्तुत किए हैं, लेकिन राज्य के पक्ष में भूमि के उत्परिवर्तन पर विवाद नहीं किया है। याचिकाकर्ता ने भूमि के भौगोलिक

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



निर्देशांक दर्शाने वाली तस्वीरें भी प्रस्तुत की हैं, जो इस बात का समर्थन करती हैं कि याचिकाकर्ता उस पर कब्जे में है।

(ख) प्रतिवादियों ने अपने उत्तर में स्वीकार किया है कि याचिकाकर्ता ने खुशरू लाल, गोरे लाल और मानशी लाल के साथ धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल किया है। धारा 8(3) के तहत नोटिस दिनांक 24.04.1981 को जारी किया गया और याचिकाकर्ता को तामील कराया गया। याचिकाकर्ता द्वारा कोई आपत्ति दर्ज नहीं की गई, जिसके बाद दिनांक 21.10.1982 को धारा 8(4) के तहत आदेश पारित किया गया। धारा 9 के तहत अंतिम विवरण दिनांक 02.09.1985 को जारी किया गया। धारा 10(1) और 10(3) के तहत अधिसूचनाएं क्रमशः दिनांक 18.11.1995 और 10.08.1996 को राज्य राजपत्र में प्रकाशित की गईं। इसके बाद दिनांक 26.03.1997 को धारा 10(5) के तहत नोटिस जारी किया गया। इसके फलस्वरूप राजस्व अभिलेखों में विवादित भूमि का राज्य के नाम पर उत्परिवर्तन किया गया और उसे तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दिया गया।

(3.18) रिट-सी संख्या 36927/2019 (राम चंद्र बनाम राज्य एवं अन्य)

(क) याचिकाकर्ता ने कहा है कि याचिकाकर्ता के पिता, माइकू लाल ने अधिनियम, 1976 की धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या सी-717/1976 के रूप में पंजीकृत है। याचिकाकर्ता ने आगे कहा है कि धारा 8(3) के तहत कोई नोटिस तामील नहीं किया गया और धारा 8(4) के तहत दिनांक 6.10.1981 को एकतरफा आदेश पारित किया गया। इसके बाद दिनांक 14.12.1995 को धारा 10(5) के तहत नोटिस जारी किया गया, लेकिन वह भी तामील नहीं किया गया। याचिकाकर्ता यह भी स्वीकार करता है कि रिक्त घोषित भूमि में से खसरा संख्या 471 उच्च न्यायालय कॉलोनी के नाम पर दर्ज है। हालांकि, याचिकाकर्ता शेष भूमि पर अपना कब्जा होने का दावा करता है। याचिकाकर्ता ने दिनांक 2.4.1994 के सरकारी आदेश का हवाला दिया है। यह कहा गया है कि अधिनियम, 1976 की धारा 10(6) के तहत कोई कार्यवाही नहीं हुई है। याचिकाकर्ता दिनांक 29.9.2015 के सरकारी आदेश का लाभ भी

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



मांगता है। याचिकाकर्ता ने विवादित भूमि पर अपने कब्जे के समर्थन में भूमि के भौगोलिक निर्देशांक दर्शाने वाली तस्वीर प्रस्तुत की है।

(ख) प्रतिवादियों ने अपने उत्तर में यह स्वीकार किया है कि मूल भूमिधारक माइकू लाल द्वारा धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल किया गया था। इसके बाद, 13.3.1981 को धारा 8(3) के तहत नोटिस जारी किया गया और 7.4.1981 को माइकू लाल को व्यक्तिगत रूप से तामील कराया गया। माइकू लाल द्वारा कोई आपत्ति दर्ज न किए जाने पर, 6.10.1981 को धारा 8(4) के तहत आदेश पारित किया गया। धारा 9 के तहत अंतिम विवरण 7.7.1982 को जारी किया गया। इसके बाद धारा 10(1) और धारा 10(3) के तहत अधिसूचना क्रमशः 10.3.1990 और 10.12.1994 को राज्य राजपत्र में प्रकाशित की गई। अंततः धारा 10(5) के तहत नोटिस 14.12.1995 को जारी किया गया। इसके बाद राजस्व अभिलेखों में भूमि राज्य के नाम पर दर्ज की गई और भूमि को तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दिया गया। इसके बाद जिला मजिस्ट्रेट, इलाहाबाद की अध्यक्षता में गठित आवंटन समिति ने अपनी 21.3.2015 की बैठक में खसरा संख्या 471 में स्थित 5131.98 वर्ग मीटर भूमि इलाहाबाद उच्च न्यायालय के आवासीय परिसर के निर्माण के लिए आवंटित की।

(3.19) रिट सी संख्या 13925 ऑफ 2021 (भानु प्रताप बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य)

(क) यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता के दादा, राम कुमार मूल भूमि धारक थे। वर्तमान रिट याचिका दायर करने से पहले याचिकाकर्ता ने अपने भाइयों, इंद्र प्रताप और विद्याचरण के साथ रिट याचिका संख्या 19264/2019 (इंद्रपाल और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) दायर की थी, जिसका निपटारा दिनांक 30.05.2019 के आदेश द्वारा किया गया था, जिसमें अधिनियम, 1976 के तहत सक्षम प्राधिकारी को याचिकाकर्ता के अभ्यावेदन पर निर्णय लेने का निर्देश दिया गया था। परिणामस्वरूप, सक्षम प्राधिकारी ने दिनांक 15.09.2020 के आदेश द्वारा

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



याचिकाकर्ता के अभ्यावेदन को अस्वीकार कर दिया था। इसके बाद, याचिकाकर्ता ने दिनांक 15.09.2020 के आदेश के विरुद्ध वर्तमान रिट याचिका दायर की।

(ख) राम कुमार ने धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी दाखिल की थी, जो हदबंदी वाद संख्या 4010/1976 के रूप में पंजीकृत है। राम कुमार का निधन हो गया और वे अपने पीछे चार पुत्र, ईश्वरदास, परमेश्वर, लाला और बुदुलरामको छोड़ गए। बाद में परमेश्वर का निधन हो गया और वे अपने पीछे तीन पुत्र रणधीर, बाबूजी और राम सिंह छोड़ गए। राम सिंह का निधन 20.10.2003 को हुआ और वे अपने पीछे तीन पुत्र इंद्रप्रताप, भानु प्रताप (याचिकाकर्ता) और विद्या चरण को छोड़ गए।

(ग) धारा 8(3) के तहत कोई नोटिस तामील नहीं किया गया और परिणामस्वरूप 22.09.1984 को धारा 8(4) के तहत एकतरफा आदेश पारित किया गया। 17.08.1992 को धारा 10(5) के तहत नोटिस भूमिधारकों को कभी तामील नहीं किया गया। याचिकाकर्ता विवादित भूमि पर कब्जे में है और अधिनियम, 1976 की धारा 10(6) के तहत कोई कार्यवाही कभी नहीं हुई है। याचिकाकर्ता का दावा है कि विवादित भूमि कृषि भूमि है और वह 02.04.1994 के सरकारी आदेश का लाभ चाहता है। इसके अतिरिक्त याचिकाकर्ता ने अपने मामले के समर्थन में खसरा के रूप में राजस्व अभिलेख प्रस्तुत किए हैं, जिसमें भूमि का कुछ भाग मूल भूमिधारक के नाम पर और शेष भाग राज्य के नाम पर दर्ज है। इसके आलावा याचिकाकर्ता ने बिजली बिल और तस्वीरें भी प्रस्तुत की हैं।

(घ) प्रतिवादियों ने इसके जवाब में स्वीकार किया है कि राम कुमार ने हदबंदी निर्धारण विवरणी दाखिल की थी। इसके बाद धारा 8(3) के तहत 30.03.1981 को नोटिस जारी किया गया और मूल भूमिधारक की पत्नी को 01.09.1984 को तामील कराया गया। हालांकि कोई आपत्ति दर्ज न होने पर धारा 8(4) के तहत 22.09.1984 को आदेश पारित किया गया। धारा 9 के तहत अंतिम वक्तव्य पंजीकृत डाक द्वारा भूमिधारक को भेजा गया था। इसके बाद धारा 10(1) और धारा 10(3) के तहत अधिसूचनाएं क्रमशः 10.03.1990 और 01.02.1992 को राज्य

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



राजपत्र में प्रकाशित की गई। धारा 10(5) के तहत कब्जा सौंपने के लिए नोटिस 17.08.1992 को जारी किया गया था। इसके बाद विवादित भूमि फसली वर्ष 1398-1403 में राजस्व अभिलेखों में राज्य के नाम पर दर्ज की गई और तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दी गई। याचिकाकर्ता द्वारा संदर्भित राजस्व अभिलेखों में अधिनियम, 1976 के तहत भूमि राज्य के नाम पर दर्ज है।

4. सुविधा के लिए, इस समूह की सभी रिट याचिकाओं का सार नीचे दी गई सारणी में दिया गया है: -

क्रम संख्या	रिट सं/पक्षों का नाम	दाखिल करने का महीना और वर्ष	धारा 8(4) के तहत आदेश की तिथि	धारा 10(5) के तहत नोटिस की तिथि	टिप्पणी
1.	रिट-सी संख्या 19612/2018 (कम्भा करण बनाम राज्य)	मई, 2018	25.2.1986	2.8.1996	याचिकाकर्ता मूल भूमिधारक के चार पुत्रों में से एक है। धारा 8(3) के तहत नोटिस 14.02.1986 को तामील किया गया। धारा 11(8) के तहत नोटिस

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



					दिनांक 18.1.2008 को मूल भूमिधारी के पुत्र जिया लाल को तामील किया गया। मूल भूमिधारी का निधन 22.03.2006 को हुआ।
2.	रिट-सी संख्या 8237/2017 (राजेंद्र प्रसाद बनाम राज्य)	फरवरी, 2017	4.11.1985	29.9.1993	राजजन उर्फ राजभवन द्वारा दायर हदबंदी विवरणी दायर की गई, याचिकाकर्ता द्वारा नहीं। याचिकाकर्ता राजजन उर्फ राजभवन का पुत्र या वंशज

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



					नहीं है।
3.	रिट-सी संख्या 8238/2017 (जमुना प्रसाद और अन्य बनाम राज्य)	फरवरी 2017	30.12.85	26.12.97	याचिकाकर्ता मूल भूमिधारक राम जतन के वंशज हैं। राम जतन को 23.12.85 को धारा 8(3) के तहत नोटिस तामील किया गया। श्रीमती निर्मला पुत्री राम जतन को 24.1.98 को धारा 11(8) के तहत नोटिस तामील किया गया। राम जतन ने धारा 11(8) के तहत नोटिस के खिलाफ

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



					23.2.1998 को आपत्ति दर्ज कराई। आपत्तियां 13.8.1998 को खारिज कर दी गई।
4.	रिट-सी संख्या 8242/17 (राम देव और अन्य बनाम राज्य) तीन हदबंदी निर्धारण मामले (क) याचिकाकर्ता संख्या 1- राम देव पुत्र दीना नाथ। (ख) याचिकाकर्ता संख्या 2- अमृत लाल पुत्र माइकू लाल। (ग) याचिकाकर्ता संख्या 3- शिव बरन पुत्र गंभीर	फरवरी 2017	14.11.84 23.9.82 5.10.81	22.4.1996 27.4.1996 2.8.1996	(क) धारा 8(3) के तहत नोटिस मूल भूमिधारक दीना नाथ को 20.10.1984 को तामील किया गया। धारा 10(5) के तहत नोटिस दीना नाथ के पुत्र बलदेव को 23.8.1996 को तामील किया गया। दीना नाथ के

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



					तीन पुत्र थे, याचिकाकर्ता, बलदेव और बजरंग। (ख) धारा 8(3) के तहत नोटिस मूल भूमिधारक माइकू लाल को तामील किया गया। 1.4.1981. धारा 9 के तहत अंतिम बयान मेवा लाल, माइकू लाल के पुत्र को दिया गया। (ग) शिव बरन - याचिकाकर्ता नानकु हीरा और पचई,
--	--	--	--	--	--

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



					मूल भूमिधारकों से संबंधित नहीं है।
5.	रिट-सी संख्या 26381/2017. (बृज लाल और अन्य बनाम राज्य) (दो हदबंदी निर्धारण मामले) (क) राज्य बनाम महादेव। (ख) राज्य बनाम सहदेव।	मई, 2017		जारी किया गया लेकिन तिथि का उल्लेख नहीं है 14.10.97	महादेव के पोते, मूल भूमिधारक। याचिकाकर्ता के पिता शारदा प्रसाद ने हदबंदी निर्धारण विवरणी दाखिल की थी। शारदा प्रसाद के दो पुत्र थे, बृज लाल और इंद्रराज। इंद्रराज रिट में पक्षकार नहीं है। सहदेव से संबंधित होने

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



					का कोई सबूत नहीं है। धारा 8(3) के तहत नोटिस शारदा प्रसाद को 29.12.81 को तामील किया गया। इसी हदबंदी मामलों से उत्पन्न दो अन्य रिट याचिकाएं
6.	रिट-सी संख्या 6765/2018 (मेवा लाल यादव बनाम राज्य)	फरवरी, 2018	22.2.85	14.10.97	याचिकाकर्ता ने 24.7.2004 को भूमि खरीदी थी। धारा 8(3) के तहत नोटिस तामील किया गया। भूमि राज्य के नाम पर दर्ज है।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



					इसी हदबंदी मामले से उत्पन्न दो अन्य रिट याचिकाएं लंबित हैं।
7.	रिट-सी संख्या 6926/2016 (मोहिब उल्लाह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य)	जनवरी, 2016		28.3.79	स्वैच्छिक कब्जे के 37 साल बाद याचिका दायर की गई। मामले के अभिलेख राज्य के पास उपलब्ध नहीं हैं। राज्य के नाम पर दर्ज भूमि।
8.	रिट-सी संख्या 6679/18 (राम सुमेर बनाम राज्य)	मार्च, 18	3.11.82	15.2.1990	मूल भूमिधारक के पोते, महादेव। महादेव के तीन पुत्र थे, हीरा लाल,

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



					मोहन लाल और बच्चा लाल। याचिकाकर्ता हीरा लाल का पुत्र है। धारा 8(3) के तहत नोटिस महादेव को 22.4.1981 को दिया गया। धारा 9 के तहत अंतिम बयान महादेव को दिया गया। धारा 10(5) के तहत नोटिस महादेव को 16.2.1990 को दिया गया।
9.	रिट-सी संख्या	नवंबर-2018	5.10.1982	23.5.1996	मूल

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



	6701/2018 (राम अवध बनाम राज्य)				भूमिधारक बच्चा लाल का पुत्र। 2.12.1981 को बच्चा लाल के भतीजे राम पाल को धारा 8(3) के तहत नोटिस तामील किया गया।
10.	रिट-सी संख्या 1125/2018 (राघवेंद्र कुमार यादव और अन्य बनाम राज्य)	मार्च 2018	23.8.1982	17.12.86	मूल भूमिधारक महादेव के पुत्र और पोते। महादेव के पुत्र भगवत प्रसाद को धारा 9 के तहत नोटिस तामील किया गया। मुनीम

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



					याचिकाकर्ता संख्या 3 को धारा 10(5) के तहत नोटिस तामील किया गया।
11.	रिट सी संख्या 11226/2018 (पुष्पा देवी और अन्य बनाम राज्य)	मई 2018	23.03.1981	01.01.1996	याचिकाकर्ता मूल भूमिधारक संकथा प्रसाद की पुत्रियाँ हैं। संकथा प्रसाद ने जिला न्यायाधीश के समक्ष अपील संख्या 959/1999 दायर की थी, जिसे 27.09.2008 को खारिज कर दिया गया था।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



12.	रिट याचिका संख्या 19678/2018 (बुद्धन प्रसाद बनाम राज्य)	मई, 2018	13.09.1982	18.09.1992	जोखु, मोती, हीरा, महादेव के पुत्र और जवाहर के पुत्र दुखरन ने अलग-अलग हदबंदी निर्धारण विवरणी दाखिल किए थे। याचिकाकर्ता जोखु का पुत्र है। दुखरन की पत्नी को धारा 8(3) के तहत नोटिस तामील किया गया था। सभी मूल भूमिधारकों को धारा 10(5) के तहत नोटिस
-----	---	----------	------------	------------	--

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



					तामील किया गया था।
13.	रिट याचिका संख्या 19694/2018 (देवेंद्र कुमार जायसवाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य)	मई, 2018	26.03.1981	21.08.1990	याचिकाकर्ता मूल भूमिधारक शंभू नाथ के पुत्र हैं। धारा 8(3) के तहत नोटिस अस्वीकृत कर दिया गया। शंभू नाथ द्वारा दायर धारा 9 के तहत अंतिम बयान के खिलाफ दिनांक 21.03.1983 को आपत्तियां दायर की गईं। दिनांक 29.04.1985 को खारिज

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



					कर दिया गया।
14.	रिट याचिका संख्या 19800/2018 (स्वर्गीय लीलावती बनाम राज्य)	मई, 2018	19.06.1981	21.03.1988	धारा 8(3) के तहत नोटिस दिनांक 11.04.1981 को तामील किया गया। दिनांक 05.05.1981 को धारा 8(3) के तहत नोटिस के जवाब में आपत्तियां दायर की गईं।
15.	रिट सी संख्या 29963/2018 (राम लखन बनाम राज्य)	अगस्त, 2018	18.12.1979	20.10.1993	याचिकाकर्ता मूल भूमिधारक मेवा लाल के चार पुत्रों में से एक है। धारा 8(3) के

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



					तहत नोटिस 18.07.1979 को मेवा लाल के पुत्र बृज लाल को तामील किया गया। मेवा लाल ने 3 सितंबर 1979 को धारा 8(3) के तहत नोटिस पर आपत्ति दर्ज कराई। धारा 9 के तहत अंतिम बयान मेवा लाल की बहू श्रीमती रामवती को 15 मई 1980 को दिया गया।
16.	रिट याचिका संख्या 34357/2018 (कुंवर	अक्टूबर, 2018	17.11.1982	01.06.1996	याचिकाकर्ता मूल

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



	भरत सिंह बनाम राज्य)				भूमिधारक बृज मोहन सिंह का पोता है। धारा 8(3) के तहत नोटिस 24 सितंबर 1982 को बृज मोहन सिंह के भतीजे जयकरण सिंह को दिया गया। धारा 9 के तहत अंतिम बयान देने से इनकार कर दिया गया। राजस्व अभिलेखों में वर्तमान में रेल मंत्रालय, भारत सरकार का नाम दर्ज
--	----------------------	--	--	--	---

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



					है।
17.	रिट याचिका संख्या 36216/2019 (मटरू बनाम राज्य)	19.05.2018	21.10.1982	26.03.1997	याचिकाकर्ता उन चार मूल भूमिधारकों में से एक है जिन्होंने हदबंदी विवरणी दाखिल की थी। धारा 8(3) के तहत नोटिस तामील किया गया।
18.	रिट याचिका संख्या 36927/2019 (राम चंद्र बनाम राज्य)	नवंबर, 2019	16.10.1981	14.12.1985	याचिकाकर्ता मूल भूमिधारक माइकू का पुत्र है। धारा 8(3) के तहत नोटिस माइकू लाल को 07.04.1981 को तामील

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



					किया गया। उच्च न्यायालय, कॉलोनी के लिए जमीन का हिस्सा हस्तांतरित किया गया।
19.	रिट याचिका संख्या 13925/2021	मई 2019 (प्रथम रिट)	22.09.1984	17.08.1992	मूल भूमिधारक राम कुमार के पोते, जिनके चार पुत्र जीवित थे। राम कुमार की पत्नी को धारा 8(3) के तहत नोटिस दिनांक 01.09.1984 को तामील कराया गया।

पक्षकारों की दलीलें।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



5. ऊपर विस्तृत विवाद के तथ्यात्मक पहलुओं के आलोक में याचिकाकर्ताओं का तर्क है कि याचिकाकर्ताओं को धारा 8(3) के तहत कोई नोटिस तामील नहीं कराया गया था और इस प्रकार धारा 8(4) के तहत पारित आदेश विधि की दृष्टि से मान्य नहीं थे। यह भी कहा गया है कि याचिकाकर्ताओं को धारा 10(5) के तहत नोटिस तामील नहीं कराया गया था। स्वैच्छिक रूप से कब्जे का हस्तांतरण का प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि धारा 10(5) के तहत नोटिस पर भूमिधारकों द्वारा हस्ताक्षर नहीं किए गए हैं। याचिकाकर्ताओं का यह स्पष्ट तर्क है कि अधिनियम, 1976 की धारा 10(6) के तहत कोई कार्यवाही नहीं हुई और न ही खाली भूमि से कोई जबरन बेदखली हुई। इन परिस्थितियों में विवादित भूमि का कब्जा कभी भी भूमिधारकों से राज्य को हस्तांतरित नहीं हुआ और याचिकाकर्ता खाली भूमि पर कब्जा बनाए रहे। इसके अलावा, अधिनियम, 1976 की धारा 35 के तहत गठित उत्तर प्रदेश शहरी भूमि सीमा (कब्जा लेना, राशि का भुगतान और संबंधित मामले) निर्देश, 1983 के प्रावधानों के तहत भी कोई कार्यवाही नहीं हुई। इन परिस्थितियों में, यह तर्क दिया जाता है कि अधिनियम, 1976 की धारा 10(5) के तहत राज्य का कथित कब्जा केवल कागजी कब्जा है, वास्तविक कब्जा नहीं। याचिकाकर्ताओं ने अपने मामले के समर्थन में इसी न्यायालय द्वारा इसी प्रकार की रिट याचिकाओं में दिए गए निर्णयों के साथ समानता का दावा किया है।

6. याचिकाकर्ताओं ने दिनांक 02.09.2000 और 29.09.2015 के सरकारी आदेशों का लाभ भी मांगा है, जिन भूस्वामियों के पास निरसन अधिनियम, 1999 के लागू होने के समय भूमि का कब्जा था, वे निरसन अधिनियम, 1999 की धारा 4 के लाभ के पात्र होंगे, क्योंकि अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही समाप्त हो जाएगी और ऐसे भूस्वामियों को खाली भूमि पर कब्जा बनाए रखने का अधिकार होगा। यह भी तर्क दिया गया है कि राज्य को यह साबित करना होगा कि अधिनियम, 1976 की धारा 10 की उपधारा (5) के तहत खाली भूमि का स्वैच्छिक समर्पण हुआ है और याचिकाकर्ताओं द्वारा कब्जे का कोई समर्पण नहीं हुआ है। याचिकाकर्ताओं ने अपने मामले के समर्थन में 02.04.1994 के सरकारी आदेश पर भी भरोसा किया है, जिसके अनुसार कृषि भूमि के संबंध में अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही रोक दी

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



गई थी। याचिकाकर्ताओं ने भूमि पर अपने कब्जे के दावे के समर्थन में राजस्व अभिलेखों, विवादित भूमि की कथित तस्वीरों, बिजली बिलों, किसान बही और सिंचाई विभाग को भुगतान की गई राशि की रसीदों का हवाला दिया है।

7. दूसरी ओर, राज्य-प्रतिवादियों ने तर्क दिया है कि कार्यवाही अधिनियम, 1976 के प्रावधानों के अनुसार हुई थी। मूल भूमिधारक अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही से भलीभांति परिचित थे, लेकिन उन्होंने कभी इस पर आपत्ति नहीं जताई और कुछ मामलों में जहां आपत्तियां उठाई गईं, उन्हें खारिज कर दिया गया और कार्यवाही अंतिम रूप ले चुकी थी। यह भी तर्क दिया गया है कि अधिनियम, 1976 की धारा 10 (3) के तहत अधिसूचना प्रकाशित होने के बाद भूमि राज्य के अधीन आ गई और उसके बाद धारा 10 (5) के तहत भूमि का कब्जा ले लिया गया, जिसमें मूल भूमिधारकों द्वारा खाली भूमि का स्वैच्छिक कब्जा सौंपने पर कोई आपत्ति नहीं उठाई गई। बाद में, खाली भूमि राज्य (सक्षम प्राधिकारी, शहरी सीमा) के नाम पर दर्ज कर दी गई। इसके कुछ समय बाद ही 11.12.1996 के सरकारी आदेश के अनुसार भूमि का कब्जा तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण, जो अब प्रयागराज विकास प्राधिकरण है, को हस्तांतरित कर दिया गया।

8. प्रतिवादियों की ओर से जोरदार ढंग से यह तर्क दिया गया है कि भूमि को रिक्त अधिशेष घोषित किए जाने के 32-35 वर्ष बाद और निरसन अधिनियम, 1999 के लागू होने के 17-19 वर्ष बाद रिट याचिकाएं दायर की गई हैं। मूल भूमिधारकों को अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही की जानकारी थी और उन्होंने अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही पर कोई आपत्ति नहीं जताई थी, इसलिए याचिकाकर्ताओं द्वारा अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही को चुनौती नहीं दी जा सकती, क्योंकि वे मूल भूमिधारकों के उत्तराधिकारी हैं और उनमें से अधिकांश को कार्यवाही की कोई जानकारी नहीं है, और वह भी इतने लंबे समय के बाद।

9. इसके अलावा, मूल भूमिधारकों के सभी उत्तराधिकारी रिट याचिकाओं में पक्षकार के रूप में शामिल नहीं हुए थे, जो स्वयं दर्शाता है कि याचिकाकर्ताओं के पास खाली भूमि का

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



कब्जा नहीं था और उन्होंने इस न्यायालय द्वारा पारित समान आदेशों के साथ समानता का दावा करते हुए बाद में रिट याचिका दायर की थी।

10. यह भी निवेदन किया गया है कि खाली पड़ी भूमि से संबंधित राजस्व प्रविष्टियाँ बहुत पहले ही राज्य के नाम पर विधिवत दर्ज कर ली गई थीं और याचिकाकर्ता इस तथ्य से भलीभांति अवगत थे, फिर भी याचिकाकर्ताओं ने इस मामले पर कोई कार्रवाई नहीं की। अधिनियम, 1976 के अंतर्गत कार्यवाही निरसन अधिनियम, 1999 के लागू होने से बहुत पहले ही समाप्त हो चुकी थी। आगे यह तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ताओं ने अधिनियम, 1976 के अंतर्गत कार्यवाही पर आपत्ति करने के अपने अधिकार को त्याग दिया था। इसके अतिरिक्त यह भी दावा किया गया है कि रिट याचिकाएँ दायर करने का कोई कारण नहीं था।

11. तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण, जो अब प्रयागराज विकास प्राधिकरण है, ने अपनी प्रस्तुतियों में राज्य द्वारा लिए गए रुख का समर्थन किया है और कहा है कि अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही समाप्त होने के बाद, 11.02.1996 के सरकारी आदेश के अनुसार भूमि का कब्जा प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दिया गया था। प्राधिकरण ने 04.03.2011 और 07.06.2011 के सरकारी आदेशों और इसके अनुसरण में जारी किए गए अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेट, इलाहाबाद के 10.12.2013 के पत्र पर भी भरोसा जताया है, जिसमें प्राधिकरण को अधिनियम, 1976 से उत्पन्न मामलों के संबंध में आवश्यक पैरवी करने का निर्देश दिया गया था। यह भी बताया गया है कि प्राधिकरण विवादित भूमि पर कब्जे में है।

12. अतः, संबंधित पक्षों के अभिवेदनों, साक्ष्यों और प्रस्तुतियों से जो स्थिति उभरती है, वह इस प्रकार है:-

(i) मूल भूमिधारकों को अधिनियम, 1976 के अंतर्गत प्रारंभ की गई कार्यवाही की विधिवत जानकारी थी और अधिनियम, 1976 के अंतर्गत कार्यवाही के संबंध में नोटिस उन्हें किसी न किसी स्तर पर तामील कराए गए थे।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(ii) मूल काश्तकारों ने अधिनियम, 1976 के अंतर्गत उनके विरुद्ध प्रारंभ की गई कार्यवाही पर कोई आपत्ति नहीं जताई और कुछ द्वारा विभिन्न चरणों में दायर की गई आपत्तियों को खारिज कर दिया गया।

(iii) अधिकांश रिट याचिकाएं मूल भूमिधारकों के पुत्रों/पुत्रियों/पोतों द्वारा दायर की गई हैं और अधिकांश मामलों में मूल भूमिधारक के सभी उत्तराधिकारी रिट याचिका में पक्षकार के रूप में शामिल नहीं हुए हैं।

(iv) अधिनियम, 1976 की धारा 10 (5) के अंतर्गत नोटिस जारी किए गए और राजस्व अभिलेखों में रिक्त भूमि/विवादित भूमि राज्य के नाम पर, अर्थात् सक्षम प्राधिकारी, शहरी सीमा के नाम पर दर्ज की गई।

(v) अधिनियम, 1976 की धारा 8 (4) के तहत भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने के 32-35 वर्ष बाद और निरसन अधिनियम, 1999 के लागू होने के लगभग 17 से 20 वर्ष बाद ये रिट याचिकाएँ दायर की गई हैं।

(vi) किसी भी रिट याचिका में राज्य द्वारा अधिनियम, 1976 की धारा 10 (6) के तहत कोई कार्यवाही शुरू नहीं की गई है।

(vii) याचिकाकर्ताओं ने दो रिट याचिकाओं को छोड़कर, जिनमें वर्ष 2017 में विलंबित रूप से अभ्यावेदन दायर किए गए थे, और एक मामले में इस न्यायालय ने वर्ष 2019 में सक्षम प्राधिकारी को मामले में निर्णय लेने का निर्देश दिया था, किसी भी समय सक्षम प्राधिकारियों के समक्ष अपनी शिकायतें प्रस्तुत नहीं की हैं।

चर्चा एवं निष्कर्ष।

13. इस प्रकार, याचिकाकर्ताओं के तर्क का सार यह है कि अधिनियम, 1976 की धारा 10(6) के तहत कोई कार्यवाही कभी शुरू नहीं की गई, राज्य द्वारा लिया गया कब्जा केवल कागजी/कानूनी कब्जा था और याचिकाकर्ता खाली जमीन/विवादित जमीन पर कब्जा बनाए रहे।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



14. प्रतिवादियों ने इसके विपरीत दावा किया है कि धारा 10(5) के तहत नोटिस जारी होने के बाद खाली जमीन/विवादित जमीन का कब्जा त्याग दिया गया था। राजस्व अभिलेखों में राज्य का नाम दर्ज कर लिया गया और भूमि का कब्जा तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दिया गया। राज्य का दावा है कि विलंब और लापरवाही के आधार पर रिट याचिकाएँ खारिज की जानी चाहिए और विलंब के कारण विवादित भूमि पर याचिकाकर्ताओं के किसी भी अधिकार का त्याग हो गया है।

15. इसके जवाब में याचिकाकर्ताओं का तर्क है कि वे विवादित भूमि पर कब्जा बनाए हुए हैं और निरसन अधिनियम, 1999 और विभिन्न सरकारी आदेशों के लाभ के हकदार हैं, इसलिए इस न्यायालय में आने में विलंब का कोई प्रश्न ही नहीं उठता।

16. इस संबंध में अधिनियम, 1976 के तहत रिक्त भूमि पर कब्जा लेने की विधि पर विचार करना महत्वपूर्ण है। धारा 10 की उपधारा (5) और उपधारा (6) इस संबंध में प्रासंगिक हैं और वे इस प्रकार हैं:

“10. हदबंदी से अधिक रिक्त भूमि का अधिग्रहण...(1)

(2)

(3)

(4)

(5) जहां उपधारा (3) के तहत कोई रिक्त भूमि राज्य सरकार में निहित है, तो सक्षम प्राधिकारी लिखित नोटिस द्वारा उस भूमि पर कब्जा रखने वाले किसी भी व्यक्ति को नोटिस की तामील के तीस दिनों के भीतर राज्य सरकार या इस संबंध में राज्य सरकार द्वारा विधिवत अधिकृत किसी व्यक्ति को उसका कब्जा सौंपने या देने का आदेश दे सकता है।

(6) यदि कोई व्यक्ति उपधारा (5) के तहत दिए गए आदेश का पालन करने से इनकार करता है या विफल रहता है, तो सक्षम प्राधिकारी रिक्त भूमि पर कब्जा ले सकता है या उसे

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



संबंधित राज्य सरकार या इस संबंध में ऐसी राज्य सरकार द्वारा विधिवत अधिकृत किसी व्यक्ति को सौंप सकता है और उस उद्देश्य के लिए ऐसी भूमि का उपयोग कर सकता है। आवश्यकतानुसार बल प्रयोग किया जा सकता है।

स्पष्टीकरण- इस खंड में, धारा 11 की उपधारा (1) और धारा 14 एवं 23 में, "राज्य सरकार" का अर्थ निम्नलिखित के संबंध में है:

(क) केंद्र सरकार के स्वामित्व वाली कोई रिक्त भूमि, केंद्र सरकार को संदर्भित करती है,

(ख) किसी राज्य सरकार के स्वामित्व वाली और केंद्र शासित प्रदेश में स्थित या छावनी अधिनियम, 1924 (1924 का 2) की धारा 3 के अंतर्गत घोषित किसी छावनी की स्थानीय सीमा के भीतर स्थित कोई रिक्त भूमि, उस राज्य सरकार को संदर्भित करती है।"

17. अधिनियम, 1976 के अंतर्गत कब्जा लेने के तरीके पर सर्वोच्च न्यायालय ने उत्तर प्रदेश राज्य बनाम हरि राम (2013) 4 एससीसी 280 के मामले में भरपूर रूप से विचार किया है, जिस पर याचिकाकर्ता ने भी काफी हद तक भरोसा किया है। अन्य बातों के अलावा, उपरोक्त धारा 10 की उपधारा (5) और उपधारा (6) के संबंध में निम्नलिखित निर्णय दिए गए हैं:

"शांतिपूर्ण बेदखली

34. धारा 10 की उपधारा (5) में पहली बार 'कब्जे' की बात की गई है, जिसमें कहा गया है कि जहां धारा 10 की उपधारा (3) के तहत कोई भूमि राज्य सरकार में निहित है, वहां सक्षम प्राधिकारी लिखित नोटिस द्वारा किसी भी व्यक्ति को, जो उस पर कब्जा रखता हो, राज्य सरकार या राज्य सरकार द्वारा विधिवत अधिकृत किसी अन्य व्यक्ति को कब्जा सौंपने या हस्तांतरित करने का आदेश दे सकता है।

35. यदि धारा 10 की उपधारा (3) के तहत दो अनुमानित प्रावधानों द्वारा वास्तविक कब्जा राज्य सरकार को हस्तांतरित हो चुका है, तो धारा 10 की उपधारा (5) के तहत "जहां कोई भूमि निहित है" अभिव्यक्ति का उपयोग करने की कोई आवश्यकता नहीं है। धारा 10 की

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



उपधारा (3) के तहत कब्जा सौंपना या हस्तांतरित करना स्वैच्छिक हो सकता है ताकि व्यक्ति को अधिनियम की धारा 11 के तहत निर्धारित मुआवजा शीघ्र मिल सके। यदि स्वैच्छिक रूप से कब्जा नहीं सौंपा जाता है, तो राज्य सरकार को धारा 10 की उपधारा (5) के तहत कब्जा समर्पण या सौंपने के लिए लिखित नोटिस जारी करना अनिवार्य है। धारा 10 की उपधारा (5) शांतिपूर्ण ढंग से कब्जा समर्पण और सौंपने की स्थिति की परिकल्पना करती है, जबकि धारा 10 की उपधारा (6) जबरन बेदखली की स्थिति की परिकल्पना करती है।

बलपूर्वक बेदखली

36. अधिनियम में बलपूर्वक बेदखली का प्रावधान है, लेकिन केवल तभी जब कोई व्यक्ति धारा 10 की उपधारा (5) के तहत दिए गए आदेश का पालन करने से इनकार करता है या विफल रहता है। धारा 10 की उपधारा (6) में फिर से "कब्जे" की बात कही गई है, जिसमें कहा गया है कि यदि कोई व्यक्ति उपधारा (5) के तहत दिए गए आदेश का पालन करने से इनकार करता है या विफल रहता है, तो सक्षम प्राधिकारी राज्य सरकार को दी जाने वाली खाली भूमि का कब्जा ले सकता है और इसके लिए, आवश्यकतानुसार बल का प्रयोग किया जा सकता है। अतः, उपधारा (6) में ऐसी स्थिति का उल्लेख है जिसमें कोई व्यक्ति उपधारा (5) के तहत दिए गए आदेश का पालन करने से इनकार करता है या विफल रहता है, ऐसी स्थिति में सक्षम प्राधिकारी बल का प्रयोग करके कब्जा ले सकता है। अतः, भूमि से जबरन बेदखली केवल उपधारा (6) के अंतर्गत आने वाली स्थिति में ही की जाती है, न कि धारा 10 की उपधारा (5) के अंतर्गत। अतः, उपधारा (5) और (6) दोनों ही स्थितियों का ध्यान रखती हैं, अर्थात् नोटिस देकर कब्जा लेना, यानी "शांतिपूर्ण बेदखली", और धारा 10(5) के अंतर्गत कब्जा सौंपने या सौंपने में विफल रहने पर धारा 10 की उपधारा (6) के अंतर्गत "जबरन बेदखली।"

18. अतः, अधिनियम, 1976 के प्रावधानों के तहत, यदि कोई व्यक्ति धारा 10 की उपधारा (5) के तहत जारी नोटिस का पालन करने से इनकार करता है या विफल रहता है, तो सक्षम प्राधिकारी राज्य सरकार को दी जाने वाली रिक्त भूमि का कब्जा ले सकता है और इसके

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



लिए, धारा 10 की उपधारा (6) का सहारा लेकर, आवश्यकतानुसार बल का प्रयोग किया जा सकता है। इस प्रकार, अधिनियम, 1976 की धारा 10 की उपधारा (5) के तहत रिक्त भूमि का स्वैच्छिक समर्पण या धारा 10 की उपधारा (6) के तहत बलपूर्वक बेदखली हो सकती है।

19. वर्तमान मामले में प्रतिवादी धारा 10 की उपधारा (5) के तहत कब्जा लेने का दावा करते हैं, जबकि याचिकाकर्ताओं का कहना है कि याचिकाकर्ताओं और उनके पूर्वजों को विवादित भूमि से कभी बेदखल नहीं किया गया था और राज्य द्वारा धारा 10 की उपधारा (6) के तहत कोई उपाय नहीं अपनाया गया था। अतः, निरसन अधिनियम, 1999 के प्रावधानों के अनुसार, याचिकाकर्ता विवादित भूमि पर अपना कब्जा बनाए रखने के हकदार हैं क्योंकि राज्य द्वारा लिया गया कब्जा केवल कानूनी तौर पर कब्जा है। याचिकाकर्ताओं ने विवादित भूमि पर कब्जे से संबंधित अपने मामले के समर्थन में कुछ राजस्व अभिलेख, विवादित भूमि की तस्वीरें, बिजली बिल आदि प्रस्तुत किए हैं।

20. जहां तक राजस्व अभिलेखों का संबंध है, याचिकाकर्ताओं ने अपनी कई रिट याचिकाओं में यह स्वीकार किया है कि राजस्व अभिलेखों में भूमि राज्य के नाम पर दर्ज है, और याचिकाकर्ताओं ने राज्य के इस दावे का खंडन भी नहीं किया है। इसके अलावा, ऐसा कोई तर्क नहीं है कि याचिकाकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत राजस्व अभिलेखों में विवादित भूमि याचिकाकर्ताओं या उनके पूर्वजों के नाम पर दर्ज है। याचिकाकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत राजस्व अभिलेखों से भी यह तथ्य स्पष्ट नहीं होता है। दूसरी ओर, राज्य का यह विशिष्ट मामला है कि अधिनियम, 1976 की धारा 10 (5) के तहत नोटिस जारी करने के बाद राजस्व अभिलेखों में भूमि का राज्य के नाम पर उत्परिवर्तन किया गया था और इसके समर्थन में कई रिट याचिकाओं में राजस्व अभिलेख भी प्रस्तुत किए गए हैं।

21. याचिकाकर्ताओं द्वारा जिन तस्वीरों पर भरोसा किया गया है, जिनमें से कुछ में भूमि के भौगोलिक निर्देशांक दिखाए गए हैं, उन्हें कब्जे का प्रमाण नहीं कहा जा सकता। यह बिल्कुल भी संभव नहीं है कि तस्वीरें विवादित भूमि से संबंधित हैं और इस प्रकार यह इस बात

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



का प्रमाण नहीं हो सकती कि कब्जा लिया गया है या नहीं। यदि विवादित भूमि खाली रहती है, तो थोड़े समय के लिए पुनः प्रवेश करने पर भी तस्वीरें ली जा सकती हैं। सिंचाई विभाग द्वारा जारी बिजली बिलों और रसीदों के मामले में भी यही स्थिति है क्योंकि उनमें किसी भी भूखंड संख्या का उल्लेख नहीं है जिसके संबंध में वे जारी किए गए हैं। कुछ याचिकाकर्ताओं द्वारा जिन किसान बहियों का हवाला दिया गया है, वे वर्ष 1997 से संबंधित हैं और याचिकाकर्ताओं के लिए किसी काम की नहीं हैं। इन परिस्थितियों में, विवादित भूमि पर याचिकाकर्ताओं के कब्जे को साबित करने के लिए उपर्युक्त दस्तावेजों का साक्ष्य के रूप में कोई विशेष महत्व नहीं है।

22. दूसरी ओर, प्रतिवादियों ने धारा 10(5) के तहत जारी नोटिसों पर भरोसा करते हुए यह तर्क दिया है कि स्वैच्छिक समर्पण या कब्जे का हस्तांतरण अधिनियम, 1996 के तहत भूमि पर कब्जा लेने के तरीकों में से एक है। इसके अलावा, प्रतिवादियों का यह विशिष्ट मामला है कि अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही निरसन अधिनियम, 1976 के लागू होने से पहले ही समाप्त हो चुकी थी। याचिकाकर्ताओं द्वारा यह भी विवादित नहीं है कि विवादित भूमि राजस्व अभिलेखों में राज्य के पक्ष में दर्ज की जा चुकी है और यह भी स्पष्ट है कि वर्तमान रिट याचिकाओं को दाखिल करने से पहले याचिकाकर्ताओं या उनके पूर्ववर्तियों द्वारा किसी भी समय प्रविष्टियों को चुनौती नहीं दी गई है, सिवाय दो याचिकाओं के जिनमें वर्ष 2017 में सक्षम प्राधिकारी के समक्ष विलंबित अभ्यावेदन दाखिल किए गए हैं।

23. प्रतिवादियों ने 11.12.1996 के सरकारी आदेश पर भी भरोसा जताया है। जिसके अनुसरण में खाली जमीन को तत्कालीन इलाहाबाद विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित किया गया था, सरकारी आदेश इस प्रकार है:

"संख्या 2893/9--न0भू0/96/10 यू0सी0/84

प्रेषक,

अखण्ड प्रताप सिंह

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



प्रमुख सचिव,

उत्तर प्रदेश शासन।

सेवा में,

जिलाधिकारी, बरेली, मेरठ, सहारनपुर, देहरादून, आगरा, अलीगढ़,

वाराणसी, नासिक, मथुरा, गाजियाबाद, कानपुर।

आवास अनुभाग 6 लखनऊ: दिनांक 11 दिसम्बर, 1996

विषय:- नगर भूमि (अधिभक्तम सीमा एवं विनियमन) अधिनियम, 1976 के अंतर्गत शासन में निहत एवं कब्जे में ली गई भूमि का निस्तारण।

महोदय,

उपर्युक्त विषय पर मुझे यह कहने का निर्देश हुआ है कि वर्तमान प्रक्रिया अनुसार नगर भूमि (अधिकतम सीमा एवं विनियमन) अधिनियम, 1976 के विभिन्न प्रावधानों के अन्तर्गत सीलिंग से अप्रभावित भूमि को कम करते हुये सीमाधिक्य भूमि की गणना सक्षम पदाधिकारियों द्वारा की जाती है और आपत्तियों के निस्तारण के पश्चात् पश्चात् धारा 10(3) व 10(5) के अन्तर्गत सीमाधिक्य भूमि के अन्तिम रूप में शासन में निहित हो जाने एवं कब्जा प्राप्त हो जाने पर उसको आवेदन/निस्तारण अधिनियम की धारा 23 के अधीन राज्य सरकारों द्वारा शासनादेश संख्या-559/ उन्वास-109 यू०सी 82, दिनांक 27-2-1984 एवं शासनादेश संख्या-317/9-न०भू०/96-109 यू०सी०/81, दिनांक 27-2-1996 में विहित विधि प्रक्रिया एवं शर्तों के अनुसार किया जाता है। इस शासनादेश के अनुसार सीलिंग की भूमि आवंटित करने में विकास प्राधिकरणों आवास एवं विकास परिषद और विभिन्न सरकारी विभागों/उपक्रमों को अपने कर्मचारियों के आवास आवंटन में प्राथमिकता दी जाती है। इस सम्बन्ध में शासन के संज्ञान में यह बात लायी गयी है कि धारा-10 (5) के अन्तर्गत कब्जे में ली गयी काफी भूमि आवंटन हेतु अवशेष पड़ी है और ऐसी भूमि के आवेदन में अपेक्षित प्रगति नहीं हो सकी है, जिसके फलस्वरूप

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



ऐसी भूमि के त्वरित आवंटन निस्तारण के सम्बन्ध में सम्यक विचारोपरान्त शासन में उक्त शासनादेशों दिनांक 27.2.1984 व 27.2.1996 तथा अन्य तत्सम्बन्धी को आंशिक रूप से संशोधित करते हुये निम्न निर्णय लिये हैं :-

(1) नगर भूमि (अधिकतम सीमा एवं विनियमन) अधिनियम, 1976 को प्रावधानों के अन्तर्गत शासन में निहित समस्त सीमाधिक्य भूमि नजूल भूमि की तहत विकास प्राधिकरणों को रख-रखाव के लिये हस्तान्तरित कर दी जायेगी, जिसका उपयोग उनके द्वारा आवश्यकतानुसार शासन के निर्देशों के अनुरूप सुनिश्चित किया जायेगा, जो भूमि प्राधिकरण उत्तर प्रदेश आवास एवं विकास परिषद को अपनी योजनाओं के लिये उपयुक्त न होगी, यह भी विकास प्राधिकरणों की अभिरक्षा में ही रहेगा।

(2) अन्य सरकारी विभागों/सार्वजनिक उपकरणों को राज्य सरकार में निहित ऐसी सामाधिक्य भूमि का आवंटन शासनादेश दिनांक 27.2.1984 उल्लिखित जिलाधिकारी की अध्यक्षता में गठित समिति द्वारा अब सीधे किया जायेगा तथा आवंटित भूमि का निर्धारित भू-मूल्य जमा हो जाने पर उसका कब्जा आवंटी विभाग को जिलाधिकारी/उपाध्यक्ष विकास प्राधिकरण द्वारा सीधे दे दिया जायेगा। अतः इस कोटि में प्रकरणों का प्रस्ताव शासन को प्रेषित किये जाने की आवश्यकता नहीं होगी। यह भी स्पष्ट करना है कि यदि आवंटी विभाग द्वारा दीर्घ अवधि तक आवंटित भूमि का मूल्य सुसंगत लेखाशीर्षक में जमा नहीं किया जाता है तो ऐसे मामलों में जिलाधिकारी उसी भूमि को आवश्यकतानुसार किसी दूसरे इच्छुक विभाग के पक्ष में भी आवंटित कर सकते हैं। ऐसी आवंटनों के लिये, शासनादेश दिनांक 27.2.1984 के अनुसार गठित आवंटन समिति के सदस्य सचिव, सम्बन्धित सक्षम प्राधिकारी के स्थान पर अब सम्बन्धित विकास प्राधिकरण के उपाध्यक्ष/सचिव होंगे जो बैठक का आयोजन करायेंगे। सक्षम प्राधिकारी नगर भूमि सीमारोपण, समिति को सदस्य की हैसियत से अपना प्रभावी सहयोग देंगे।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(3) विकास प्राधिकरणों की जो भूमि हस्तान्तरित हो जायेगी उस पर अवैध कब्जे व निर्माण हटाने की कार्यवाही सम्बन्धित विकास प्राधिकरण, द्वारा ही यथाआवश्यक जिला प्रशासन की सहायता लेकर की जायेगी।

(4) समस्त सीमाधिक्य भूमि जो विकास प्राधिकरण को हस्तान्तरित होगी, से सम्बन्धित अभिलेखों को रख-रखाव विकास प्राधिकरण द्वारा ही किया जायेगा।

(5) शासनादेश दिनांक 27.2.1984 व 27.2.1996 तथा एतद्विषयक अन्य शासनादेशों में अन्य व्यवस्थायें, पूर्ववत् रहेगी। 1

2- अनुरोध है कि कृपया उपरोक्तानुसार कार्यवाही प्राथमिकता के आधार पर शीघ्र सुनिश्चित करने का कष्ट करे।

भवदीय,

अखण्ड प्रताप सिंह

प्रमुख सचिव।"

24. सरकारी आदेश के अवलोकन से पता चलता है कि धारा 10 (3) के तहत अधिसूचना के प्रकाशन और राज्य में रिक्त भूमि के निहित होने तथा धारा 10 (5) के तहत कब्जा लेने के बाद, धारा 10 (5) के तहत कब्जा ली गई पर्याप्त भूमि का आवंटन अभी बाकी था और इस प्रकार इसे विकास प्राधिकरणों को हस्तांतरित करने का प्रयास किया गया था। अतः, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अधिनियम, 1976 की धारा 10 (6) के तहत प्रदान किए गए उपायों का सहारा लिए बिना धारा 10 (5) के तहत रिक्त भूमि पर कब्जा लेने की प्रथा राज्य में प्रचलित थी।

25. कई रिट याचिकाओं में, याचिकाकर्ता स्वयं स्वीकार करते हैं कि विवादित भूमि राजस्व अभिलेखों में राज्य (सक्षम प्राधिकारी, शहरी सीमा) के नाम पर दर्ज है। इसके अलावा,

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



याचिकाकर्ताओं ने राज्य द्वारा किए गए इस तर्क का भी खंडन नहीं किया है कि धारा 10(5) के तहत जारी नोटिसों के अनुसार राजस्व अभिलेखों में राज्य का नाम दर्ज किया गया था।

26. हम यह भी जानते हैं कि राजस्व अभिलेखों में भूमि का उत्परिवर्तन ऐसी भूमि पर स्वामित्व का सृजन या समाप्ति नहीं करता है और न ही स्वामित्व पर इसका कोई अनुमानित मूल्य है और राजस्व प्रविष्टियाँ केवल उस व्यक्ति को भूमि राजस्व का भुगतान करने के लिए सक्षम बनाती हैं, जिसके पक्ष में उत्परिवर्तन का आदेश दिया गया है। लेकिन साथ ही राजस्व अभिलेखों में प्रविष्टियाँ कब्जे के संबंध में एक अनुमान उत्पन्न करती हैं, लेकिन इसमें कोई संदेह या विवाद नहीं है कि ऐसा अनुमान खंडनीय है। इस संबंध में सर्वोच्च न्यायालय ने **हरियाणा राज्य और अन्य बनाम अमीन लाल (मृतक) उनके कानूनी वारिसों और अन्य** के मामले में, दिनांक 19.11.2024 को दिए गए निर्णय में निम्नलिखित कहा था:-

“8.2 वादकर्ताओं ने अपने स्वामित्व को स्थापित करने के लिए जमाबंदी प्रविष्टियों पर भरोसा किया। वर्ष 1969-70 की जमाबंदी (प्रदर्श पी-1) में श्री अमीन लाल का नाम आधे हिस्से के स्वामी के रूप में दर्ज है। राजस्व अभिलेख सरकारी अधिकारियों द्वारा नियमित रूप से कर्तव्यों के दौरान रखे गए सार्वजनिक दस्तावेज हैं और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 35 के तहत इनकी सत्यता का अनुमान लगाया जाता है। यद्यपि यह सच है कि राजस्व प्रविष्टियाँ स्वयं स्वामित्व प्रदान नहीं करती हैं, फिर भी इन्हें कब्जे के साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है और अन्य साक्ष्यों द्वारा समर्थित होने पर स्वामित्व के दावे का समर्थन कर सकती हैं।”

27. इन परिस्थितियों में राजस्व प्रविष्टियों के आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि विवादित भूमि का कब्जा राज्य के पास है और याचिकाकर्ताओं को यह साबित करने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने होंगे कि कब्जा उनके पास है। हालांकि, याचिकाकर्ताओं द्वारा इस संबंध में प्रस्तुत किए गए दस्तावेज, ऊपर बताए गए कारणों से, साक्ष्य के रूप में कम महत्व रखते हैं।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



28. हम इस तथ्य से भलीभांति अवगत हैं कि राज्य को यह सिद्ध करना होगा कि 18.03.1999 से पहले, यानी निरसन अधिनियम, 1999 के लागू होने की तिथि से पहले, भूमि का स्वैच्छिक समर्पण हुआ था। पक्षों के कथन, अभिलेखों पर मौजूद साक्ष्य और इस न्यायालय में याचिकाकर्ताओं का उदासीन रवैया निश्चित रूप से राज्य के पक्ष में पलड़ा झुकाता है और इस संबंध में प्रथम दृष्टया मामला बनता है, लेकिन किसी निर्णायक निष्कर्ष पर पहुंचना कठिन है।

29. चाहे जो भी हो, हम इस तथ्य को नजरअंदाज नहीं कर सकते कि कब्जे का तथ्य मूलतः एक तथ्यात्मक प्रश्न है। हालांकि ऐसा कोई अटल नियम नहीं है कि तथ्य के प्रश्न का निर्धारण रिट अधिकार-क्षेत्र के अंतर्गत नहीं किया जा सकता, लेकिन यदि पक्षकारों के बीच तथ्य के प्रश्न पर गंभीर विवाद हो और अभिलेख में मौजूद साक्ष्य न्यायालय को किसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचने में अपर्याप्त/असंपूर्ण हों, तो रिट न्यायालय सामान्यतः ऐसे प्रश्न का निर्णय करने से परहेज करता है। अतः, इन परिस्थितियों में, हम इस निर्णय के उत्तरार्ध में कब्जे के प्रश्न पर विचार करेंगे।

30. यह कहा गया है कि विलंब और लापरवाही के प्रश्नों के साथ-साथ अधिनियम, 1976 के अंतर्गत कार्यवाही पर प्रश्न उठाने के अधिकार के त्याग के संबंध में, रिट याचिका में मांगी गई राहतें प्रासंगिक हैं। अधिकांश रिट याचिकाएं प्रमुख रिट याचिका, रिट सी संख्या 19612/2018 (कम्भाकरण बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) में मांगी गई राहतों के समान राहतों की मांग करते हुए दायर की गई हैं, रिट याचिका में मांगी गई राहत का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। अधिकांश रिट याचिकाओं में सरकारी आदेशों पर, विशेष रूप से दिनांक 29.09.2015 के सरकारी आदेश पर, जिसके आधार पर रिट याचिका दायर की गई है, भरोसा जताया गया है। कुछ रिट याचिकाओं में यह आरोप लगाया गया है कि भूमि माफिया याचिकाकर्ताओं के शांतिपूर्ण कब्जे में हस्तक्षेप कर रहे हैं और दावा कर रहे हैं कि विवादित भूमि, हदबंदी भूमि है।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



31. दिनांक 29.09.2015 के सरकारी आदेश के अवलोकन से पता चलता है कि यह आदेश सर्वोच्च न्यायालय के **उत्तर प्रदेश राज्य बनाम हरिराम 2013 (4) एससीसी 280** मामले में दिए गए फैसले के बाद जारी किया गया था। इसके अलावा, उक्त सरकारी आदेश दिनांक 09.02.2000, 09.08.2000 और 24.01.2001 के पूर्व सरकारी आदेशों पर भी भरोसा जताता है। शासनादेश दिनांक 29.09.2015 इस प्रकार है:-

संख्या-2228/आठ-6-15-124...सी/13

प्रेषक,

पनधारी यादव,

सचिव

उत्तर प्रदेश, शासन।

सेवा में,

जिलाधिकारी

गोरखपुर, वाराणसी इलाहाबाद, लखनऊ,

कानपुर, आगरा, मेरठ, मुरादाबाद, अलीगढ़, बरेली, सहारनपुर।

आवास एवं शहरी नियोजन अनुभाग-6 लखनऊ: दिनांक 29 सितम्बर 2016

विषय- नगर भूमि (अधिकतम सीमा एवं कार्यभार) निरसन अधिनियम, 1999 तत्कम में निर्गत शासनादेश तथा मा0 सुप्रीम कोर्ट के निर्णय दिनांक 11.3.2013 के संबंध में।

महोदय,

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



उपर्युक्त विषय पर मुझे यह कहने का निर्देश हुआ है कि भारत सरकार के अधिनियम संख्या-15/1999 दिनांक 18.3.1999 द्वारा नगर भूमि (अधिकतम सीमा एवं विनियमन) अधिनियम 1976 को निरसित करते हुए नगर भूमि (अधिकतम सीमा एवं विनियमन) निरसन अधिनियम 1999 प्राख्यापित किया गया जिसके क्रम में शासनादेश संख्या-502/9-न0पू0-21 यू०सी०/99, दिनांक 31.3.1999 द्वारा उक्त निरसन अधिनियम को उत्तर प्रदेश राज्य में अंगीकृत किया गया। निरसन अधिनियम 1999 की धारा-3 में यह प्राविधान है कि मूल अधिनियम का निरसन निम्नलिखित को प्रभावित नहीं करेगा-

1-(क)- धारा-10 की उपधारा (3) के अधीन किसी ऐसी रिक्त भूमि का निहित होना, जिसका कब्जा राज्य सरकार या राज्य सरकार द्वारा इस निमित्त सम्यक रूप से अधिकृत किसी व्यक्ति या सक्षम प्राधिकारी ने ले लिया है।

(ख) धारा-20 की उपधारा (1) के अधीन छूट देने संबंधी किसी आदेश या उसके अधीन की गयी किसी कार्यवाही की किसी न्यायालय के किसी निर्णय में उसके विरुद्ध किसी बात के होते हुए भी विधिमान्यता।

(ग) धारा-20 की उपधारा (1) के अधीन प्रदान की गयी छूट की शर्त के रूप में राज्य सरकार को किया गया कोई संक्षयः

(2) जहां-

(क) मूल अधिनियम की धारा-10 की उपधारा (3) के अधीन किसी भूमि को राज्य सरकार में निहित होना मानी गयी है किन्तु जिसका कब्जा राज्य सरकार या राज्य सरकार द्वारा इस निमित्त सम्यक रूप से प्राधिकृत किसी व्यक्ति या सक्षम प्राधिकारी द्वारा नहीं लिया गया और

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(ख) ऐसी किसी भूमि की बाबत जिसके लिए राज्य सरकार द्वारा किसी सक्षम का संदाय कर दिया गया है तब तक प्रत्यावर्तित नहीं की जाये और जब तक कि राज्य सरकार को संदाय की गयी रकम का यदि कोई हो प्रतिदाय नहीं कर दिया जाता।

उक्त के क्रम में शासनादेश संख्या-777/9-न०भू0-135 यू०सी०/96 दिनांक 9.2.2000 का शासनादेश संख्या-1623/9-न०पू०-2000 दिनांक 9.5.2000 एवं शासनादेश संख्या-190/9-आ-6-2001 दिनांक 24.1.2001 निर्गत किये गये जिसमें मुख्य रूप से यह व्यवस्था की गयी कि मूल अधिनियम धारा 8(4) व अन्तर्गत जो भूमि रिक्त घोषित की गई थी और धारा-10 (3) के अन्तर्गत राज्य में निहित हो चुकी थी एवं धारा 10 (5) की कार्यवाही का आदेश हो चुका था, परन्तु इस भूमि पर राज्य सरकार का कब्जा प्राप्त नहीं हो सका था, ऐसी भूमि के सम्बन्ध में मूल भूधारक को अदा की गई धनराशि भूधारक द्वारा वापस करने पर भूमि मूल भूधारक का प्रत्यावर्तित की जा सकती है किन्तु अदा की गई धनराशि भू-धारक द्वारा प्राप्त न करने की दशा में भूमि पर कब्जा किये जाने के सम्बन्ध में विधि अनुसार अग्रिम कार्यवाही अमल में लायी जाये। यह भी व्यवस्था की गई कि जिस भूमि के सम्बन्ध में धारा-10(5) की कार्यवाही के उपरान्त धारा 10 (6) की कार्यवाही पूर्ण हो चुकी है और भूमि पर राज्य सरकार द्वारा कब्जा लिया जा चुका है वह सरप्लस भूमि अन्तिम रूप से राज्य सरकार में निहित मानी जायेगी।

3. नगर भूमि सीमारोपण गोरखपुर, वाराणसी, इलाहाबाद, लखनऊ, कानपुर, आगरा, मेरठ, मुरादाबाद, अलीगढ़ बरेली, सहारनपुर में लम्बित अर्बन सीलिंग प्रकरणों का समुचित रूप से निस्तारण न होने की स्थिति में भू-धारकों / वादियों द्वारा मा० उच्च न्यायालय में अधिक संख्या में रिट याचिकाएँ योजित की जा रही हैं। नगर बस्ती कार्यालयों द्वारा रिट याचिकाओं में विभागीय पक्ष समायान्तर्गत साक्ष्यों सहित प्रबलता से प्रस्तुत न किये जाने के कारण मा० न्यायालय द्वारा पारित आदेशों के क्रम में शासन को असमंजसपूर्ण स्थिति का सामना करना पड़ रहा है।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



4. अर्बन सीलिंग के अन्य प्रकरण में राज्य सरकार द्वारा मा० उच्चतम न्यायालय नई दिल्ली में विशेष अनुमति याचिका संख्या-12960/2008 उत्तर प्रदेश राज्य बनाम हरीराम योजित की गयी। कालान्तर में अन्य जनपदों के अर्बन सीलिंग से संबंधित प्रकरणों में योजित विशेष अनुमति याचिकायें उक्त विशेष अनुमति याचिका से तलब की गयी। उक्त विशेष अनुमति याचिका संख्या 12960/2008 तथा उससे क्लब अन्य विशेष अनुमति याचिकाओं में पारित मा० उच्चतम न्यायालय के निर्णय दिनांक 11.3.2013 में अर्बन सीलिंग से सम्बन्धित प्रकरणों में मार्गदर्शक सिद्धान्त प्रतिपादित किये गये हैं। निर्णय दिनांक 11.3.2013 का महत्वपूर्ण एवं क्रियात्मक अंश निम्नवत् है-

प्रस्तर-39

धारा 10 की उपधारा (3) के तहत ज़मीन का सिर्फ मालिकाना हक मिलने से राज्य सरकार को खाली ज़मीन पर असल में कब्ज़ा करने का कोई अधिकार नहीं मिलेगा, जब तक कि 18.3.99 से पहले खाली ज़मीन का अपनी मर्ज़ी से समर्पण न किया गया हो। राज्य को यह साबित करना होगा कि खाली ज़मीन का अपनी मर्ज़ी से समर्पण हुआ है या धारा 10 के उप-धारा (5) के तहत शांति से कब्ज़ा किया गया है या धारा 10 के उप-धारा (6) के तहत ज़बरदस्ती कब्ज़ा किया गया है। इनमें से कोई भी स्थिति साबित न कर पाने पर, ज़मीन का मालिक या कब्ज़ाधारी निरसन अधिनियम के धारा 3 का फ़ायदा उठा सकता है। इस अपील में राज्य सरकार इनमें से कोई भी स्थिति साबित नहीं कर पाई और इसलिए उच्च न्यायालय का यह मानना सही है कि प्रतिवादी निरसन अधिनियम के धारा 3 का फ़ायदा पाने का हक़दार है।

प्रस्तर-40

इसलिए, हमें उच्च न्यायालय के फैसले में कोई कमी नहीं मिली और इसलिए अपील खारिज की जाती है, साथ ही दूसरी अपीलें भी खारिज की जाती हैं। राज्य की तरफ से कोई प्रपत्र पेश नहीं किया गया है जिससे पता चले कि निरसन अधिनियम के लागू होने से पहले

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



प्रतिवादी को बेदखल कर दिया गया था और इसलिए, प्रतिवादी निरसन अधिनियम के धारा 3 का फायदा पाने के हकदार हैं। हालांकि, कोई आदेश नहीं होगा...

5. नगर भूमि (अधिकतम सीमा एवं विनियमन) निरसन अधिनियम 1999 में निहित प्राविधान तथा तत्क्रम में निर्गत शासनादेश दिनांक 9.2.2000 शासनादेश दिनांक 9.8.2000 एवं शासनादेश दिनांक 24.1.2001 स्वतः स्पष्ट है। विशेष अनुमति याचिका संख्या-12960/2008 उत्तर प्रदेश राज्य बनाम हरी राम तथा उससे अन्य विशेष अनुमति याचिकाओं में पारित मा० उच्चतम न्यायालय के निर्णय दिनांक 11.3.2013 में उल्लिखित सिद्धान्त/आदेश भी स्वतः स्पष्ट है।

6. कृपया नगर भूमि (अधिकतम सीमा एवं विनियमन) निरसन अधिनियम 1999 तथा उक्त शासनादेश दिनांक 9.2.2000 शासनादेश दिनांक 9.8.2000 एवं शासनादेश दिनांक 24.1.2001 में विहित व्यवस्था विशेष अनुमति याचिका संख्या-12960/2008 उत्तर प्रदेश राज्य बनाम हरी राम में पारित मा० उच्चतम न्यायालय के निर्णय दिनांक 11.3.2013 में उल्लिखित सिद्धान्तों/आदेशों के आलोक में लम्बित प्रकरण में Legal ingredient देखते हुए आवश्यक कार्यवाही की जाये।

भवादीय

पनधारी यादव

सचिव

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



32. इसलिए, उपरोक्त सरकारी आदेश में खाली भूमि के स्वैच्छिक समर्पण या धारा 10 की उप-धारा (5) के तहत शांतिपूर्ण कब्जे के समर्पण और सुपुर्दगी या धारा 10 की उप-धारा (6) के तहत बलपूर्वक बेदखली का भी प्रावधान है, जो कि हरि राम (पूर्वोक्त) के मामले के परिच्छेद 39 पर निर्भर है। उक्त सरकारी आदेश में आगे प्रावधान है कि पूर्व में जारी सरकारी आदेश और निरसन अधिनियम, 1999 के प्रावधान इस स्थिति को स्पष्ट करते हैं।

33. दिनांक 29.09.2015 का सरकारी आदेश अतीत में इस संबंध में जारी किए गए सरकारी आदेशों पर जोर देता है और यदि, हम इस संबंध में जारी किए गए पहले सरकारी आदेश दिनांक 09.02.2000 की ओर ध्यान दिलाते हैं, जिस पर याचिकाकर्ताओं ने कई रिट याचिकाओं में भी भरोसा किया है, तो इसे निम्नानुसार पढ़ा जाता है:-

प्रेषक,

अतुल कुमार गुप्ता, उत्तर प्रदेश शासन।

सचिव,

सेवा में,

1. निदेशक, नगर भूमि सीमारोपण, उत्तर प्रदेश, जवाहर भवन, लखनऊ।

2. जिलाधिकारी / सक्षम अधिकारी,

नगर भूमि सीमारोपण

लखनऊ, कानपुर, आगरा, इलाहाबाद, वाराणसी, गोरखपुर,

मुरादाबाद, बरेली, सहारनपुर, देहरादून, अलीगढ़, मेरठ।

आवास अनुभाग - 6 लखनऊ दिनांक 09 फरवरी, 2000

विषय-नगर भूमि (अधिकतम सीमा एवं विनियमन) अधिनियम 1976 के निरसन होने के उपरान्त अवशेष लम्बित कार्यवाहियों के सम्बन्ध में।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



महोदय,

उपरोक्त विषय के सम्बन्ध में मुझे यह कहने का निर्देश हुआ है कि निरसन अधिनियम 1999 की धारा-4 के अनुसार मूल अधिनियम 1976 के अन्तर्गत लम्बित वाद व अन्य विधिक कार्यवाहियां जो किसी न्यायालय, अधिकरण या किसी प्राधिकारी के समक्ष लम्बित थी उपशमित हो जायेगा लेकिन निरसन अधिनियम की धारा-4 के परन्तुक (प्रोविजो) में उल्लिखित प्राविधानों के अनुसार मूल अधिनियम की धारा 11, 12, 13, 14 से संक्षेप सभी कार्यवाहियां चालू रहेंगी एवं मूल अधिनियम की धारा-23 एवं 34 के अन्तर्गत चल रहे वादों के उपशमन हेतु सम्बन्धित सक्षम न्यायालय, अधिकरण या प्राधिकरण के संज्ञान में लाने हेतु तत्सम्बन्धित आवेदन सक्षम न्यायालय में प्रस्तुत करना होगा तभी न्यायालय कथित प्राविधान का संज्ञान लेकर वादों को उपशमित कर सकेगा।

अधिनियम की धारा 10 (3) के प्राविधानों के अन्तर्गत जो भूमि राज्य में निहित नहीं हुई है उस भूमि पर राज्य द्वारा कब्जा किये जाने का औचित्य नहीं है। भले ही इस भूमि को सरप्लस घोषित किया गया हो। मूल अधिनियम की धारा 10 (3) के अन्तर्गत राज्य निहित हो चुकी थी एवं धारा 10 (5) की कार्यवाही का आदेश हो चुका था लेकिन इस भूमि पर राज्य सरकार का कब्जा नहीं प्राप्त हो सका था इस प्रकार के प्रकरण निरसन अधिनियम की धारा 3 (2) के अनुसार यदि शासन द्वारा प्रश्नगत भूमि के बाबत भूधारक को कोई धनराशि अदा की गयी थी यदि राज्य सरकार द्वारा अदा की गई धनराशि वापस करने की दशा में भू धारक को प्रश्नगत भूमि प्रत्यावर्तित की जा सकती है। किन्तु अदा की गयी धनराशि भू-धारक द्वारा वापस न करने की दशा में भूमि पर कब्जा किये जाने के सम्बन्ध में विधि अनुसार अग्रिम कार्यवाही अमल में लायी जाय।

अतः न्याय विभाग के उपरोक्त अभिमत के अनुक्रम में प्रचलित वादों के उपशमन हेतु अग्रिम कार्यवाही सुनिश्चित करें। इस हेतु वस्तु स्थित सम्बन्धित न्यायालय के संज्ञान में लाने हेतु आवेदन पत्र प्रस्तुत कर दिया जाय। सभी प्रश्नगत वादों में उपशमन हेतु आवेदन दिनांक

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



29.02.2000 तक लगा देना चाहिए। तदनुसार कार्यवाही सुनिश्चित करते हुए कृत कार्यवाही से शीघ्र शासन को सूचित करने का कष्ट करें।

भवदीय

ह० अपठनीय

(अतुल कुमार गुप्ता)

34. इस प्रकार, दिनांक 02.09.2000 के सरकारी आदेश में यह भी प्रावधान है कि अधिनियम, 1976 की धारा 10 (3) के तहत राज्य में निहित भूमि, जिसके संबंध में धारा 10 (5) के तहत कार्यवाही भी शुरू की गई है, लेकिन राज्य द्वारा कब्जा नहीं लिया गया है, ऐसी भूमि निरसन अधिनियम, 1999 की धारा 3 (2) के प्रावधानों द्वारा शासित होगी।

35. हमने दिनांक 29.09.2015 और 02.09.2000 के सरकारी आदेशों का अध्ययन किया है, लेकिन हमारा मानना है कि निरसन अधिनियम, 1999 की धारा 3 और धारा 4 स्वयं स्पष्ट हैं और दोनों सरकारी आदेशों में इन पर भरोसा किया गया है और ये इस प्रकार हैं:-

“3. बचत-(1) मूल अधिनियम के निरसन से प्रभावित नहीं होगा-

(क) धारा 10 की उपधारा (3) के तहत किसी रिक्त भूमि का निहित होना, जिसका कब्जा राज्य सरकार या राज्य सरकार द्वारा इस संबंध में विधिवत अधिकृत किसी व्यक्ति या सक्षम प्राधिकारी द्वारा ले लिया गया हो;

(ख) धारा 20 की उपधारा (1) के तहत छूट प्रदान करने वाले किसी आदेश या उसके तहत की गई किसी कार्रवाई की वैधता, किसी न्यायालय के विपरीत किसी निर्णय के बावजूद;

(ग) धारा 20 की उपधारा (1) के तहत छूट प्रदान करने की शर्त के रूप में राज्य सरकार को किया गया कोई भुगतान।

(2) जहां-

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(क) कोई भूमि मूल अधिनियम की धारा 10 की उपधारा (3) के तहत राज्य सरकार में निहित मानी जाती है, लेकिन जिसका कब्जा राज्य सरकार या राज्य सरकार द्वारा इस संबंध में विधिवत अधिकृत किसी व्यक्ति या सक्षम प्राधिकारी द्वारा नहीं लिया गया है; और

(ख) राज्य सरकार द्वारा ऐसी भूमि के संबंध में कोई राशि का भुगतान किया गया है, तब तक ऐसी भूमि वापस नहीं की जाएगी जब तक कि भुगतान की गई राशि, यदि कोई हो, राज्य सरकार को वापस न कर दी जाए।

4. कानूनी कार्यवाही का समापन - इस अधिनियम के प्रारंभ होने से ठीक पहले किसी न्यायालय, न्यायाधिकरण या अन्य प्राधिकरण के समक्ष मूल अधिनियम के तहत दिए गए या दिए जाने वाले किसी आदेश से संबंधित सभी कार्यवाही समाप्त हो जाएंगी।

बशर्ते कि यह धारा मूल अधिनियम की धारा 11, 12, 13 और 14 से संबंधित कार्यवाही पर लागू नहीं होगी, जहाँ तक ऐसी कार्यवाही उस भूमि से संबंधित है, जिसका कब्जा राज्य सरकार या राज्य सरकार द्वारा इस संबंध में विधिवत अधिकृत किसी व्यक्ति या सक्षम प्राधिकारी द्वारा ले लिया गया है।”

36. यहाँ आगे यह भी बताया गया है कि अतीत में जिन सरकारी आदेशों पर भरोसा किया गया है, उनमें भी यह कहा गया है कि निरसन अधिनियम, 1999 के लागू होने के बाद, अधिनियम, 1976 के तहत रिक्त घोषित की गई भूमि पर कब्जा रखने वाले भूमिधारक, भूमिधारक को भुगतान की गई किसी भी राशि की वापसी के अधीन, उस पर कब्जा बनाए रखेंगे। इस प्रकार, सरकारी आदेशों ने केवल निरसन अधिनियम, 1999 की धारा 3 के प्रावधानों पर भरोसा किया, जिसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि यदि रिक्त भूमि का कब्जा राज्य सरकार या राज्य सरकार द्वारा इस संबंध में विधिवत अधिकृत किसी व्यक्ति या सक्षम प्राधिकारी द्वारा नहीं लिया गया है और भूमि का स्वामित्व, यदि निहित है, तो राज्य सरकार में निहित है। धारा 10 (3) के तहत, राज्य सरकार द्वारा ऐसी भूमि के संबंध में भुगतान की गई किसी भी राशि की वापसी के अधीन, भूमि को मूल भूमिधारक को वापस करना आवश्यक होगा।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



इसके अलावा, ऐसी रिक्त भूमि के संबंध में अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही अधिनियम, 1976 की धारा 4 के तहत समाप्त हो जाएगी।

37. यहां यह उल्लेख करना उचित होगा कि सर्वोच्च न्यायालय ने **मदन स्वरूप पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2000) 6 एससीसी 325** के मामले में, दिनांक 18.01.2000 को दिए गए निर्णय में भी यह माना था कि यदि राज्य ने अधिशेष भूमि पर कब्जा नहीं लिया है, तो निरसन अधिनियम, 1999 की धारा 4 के तहत कार्यवाही समाप्त हो जाएगी, जिसका अर्थ यह है कि भूमिधारक ऐसी भूमि पर कब्जा बनाए रखेगा।

38. इन परिस्थितियों में, यह समझना कठिन है कि याचिकाकर्ता दिनांक 29.09.2015 के सरकारी आदेश के आधार पर एक नया कारण कैसे निकाल सकेंगे। इस न्यायालय में आने में हुई देरी की व्याख्या करते हुए, उक्त सरकारी आदेश जारी होने से स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं आया है और न ही इसके फलस्वरूप याचिकाकर्ताओं के पक्ष में कोई नए अधिकार उत्पन्न हुए हैं। निरसन अधिनियम, 1999 के प्रावधानों और वर्ष 2000 में जारी किए गए पिछले सरकारी आदेशों के प्रावधानों के अनुसार, उक्त सरकारी आदेश जारी होने से पहले भी यही स्थिति बनी हुई थी। इसलिए, हम यह समझने में असमर्थ हैं कि दिनांक 29.09.2015 का सरकारी आदेश याचिकाकर्ताओं को इस न्यायालय में आने में हुई देरी की व्याख्या करने और रिट याचिका दायर करने के लिए कार्रवाई का कारण बताने में कैसे सहायक होगा।

39. जहाँ तक दिनांक 29.09.2015 के सरकारी आदेश के अनुसरण में याचिकाकर्ताओं के सीमा संबंधी मामलों के निर्णय में परमादेश की राहत के संबंध में, प्रतिवादी का विशिष्ट मामला यह है कि अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही निरसन अधिनियम, 1999 के लागू होने से पहले ही समाप्त हो चुकी थी। इसके अलावा, याचिकाकर्ताओं ने ऊपर उल्लिखित केवल दो रिट याचिकाओं में राजस्व प्रविष्टियों में सुधार के लिए इस न्यायालय में आने से पहले सक्षम प्राधिकारी से संपर्क किया था, वह भी विलंब से वर्ष 2017 में, और वर्ष 2019 में दायर एक रिट याचिका में इस न्यायालय ने अधिनियम, 1976 के तहत सक्षम प्राधिकारी को याचिकाकर्ताओं के

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



अभ्यावेदन पर निर्णय लेने का निर्देश दिया था। हालांकि, शेष रिट याचिकाओं में याचिकाकर्ताओं ने अधिनियम, 1976 के तहत सक्षम प्राधिकारी या किसी अन्य प्राधिकारी के समक्ष अपनी शिकायतों को लेकर इस न्यायालय में आने से पहले कोई अभ्यावेदन भी नहीं किया था। इन परिस्थितियों में यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि याचिकाकर्ताओं ने विवादित विषय पर निष्क्रिय रहना पसंद किया और वर्ष 2016-17 तक और उसके बाद भी संबंधित अधिकारियों से संपर्क करना उचित नहीं समझा।

40. इस प्रकार, याचिकाकर्ताओं के स्वयं के कथनानुसार, यद्यपि याचिकाकर्ता निरसन अधिनियम, 1999 के 18.03.1999 को अधिनियमित होने पर रिक्त भूमि/विवादित भूमि पर कानूनी रूप से कब्जा रखने के हकदार हो गए थे, फिर भी वर्तमान रिट याचिकाएं इसके 17 से 20 वर्ष बाद दायर की गई हैं।

41. राजस्व अभिलेखों में प्रविष्टियों के सुधार के संबंध में भी यही स्थिति है। अधिकांश रिट याचिकाओं में याचिकाकर्ताओं द्वारा इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि विवादित भूमि के संबंध में राजस्व अभिलेखों में प्रविष्टियाँ राज्य सरकार के नाम पर हैं और अधिकांश मामलों में ये प्रविष्टियाँ अधिनियम, 1976 की धारा 10 (5) के तहत नोटिस जारी होने के बाद दर्ज की गई हैं। याचिकाकर्ताओं का यह भी दावा नहीं है कि उन्हें राजस्व अभिलेखों में राज्य के नाम पर की गई प्रविष्टियों की जानकारी नहीं थी। वास्तव में, कई रिट याचिकाओं में याचिकाकर्ताओं ने यह स्वीकार किया है कि खाली भूमि राजस्व अभिलेखों में राज्य के नाम पर दर्ज थी। इस प्रकार, उक्त राहत भी 17 से 20 वर्ष, या इससे भी अधिक समय बाद माँगी जा रही है।

42. उपरोक्त पृष्ठभूमि में, हम वर्तमान विवाद में शामिल मुद्दों के संबंध में कानून पर विचार करते हैं। हालाँकि, इस पर विचार करने से पहले, हम इस तथ्य को नज़रअंदाज़ नहीं कर सकते कि प्रत्येक निर्णय को सिद्ध या सिद्ध माने गए तथ्यों पर लागू होते हुए पढ़ा जाना चाहिए, क्योंकि वहाँ पाए जाने वाले व्यापक भावों का उद्देश्य संपूर्ण कानून की व्याख्या करना नहीं है, बल्कि उस मामले के विशिष्ट तथ्यों द्वारा नियंत्रित या सीमित होना है जिसमें ऐसे

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



भाव पाए जाते हैं। इन परिस्थितियों में, न्यायालयों को उस निर्णय का पालन करना चाहिए जिसके तथ्य विचाराधीन मामले के तथ्यों के अधिक अनुरूप प्रतीत होते हैं।

43. सर्वोच्च न्यायालय ने **भारत पेट्रोलियम कंपनी लिमिटेड बनाम एन.आर. वैरामणि (2004) 8 एस.सी.सी. 579** के मामले में यह मानते हुए कि न्यायालय को किसी भी निर्णय पर तब तक भरोसा नहीं करना चाहिए जब तक कि इस बात पर चर्चा न हो जाए कि विचाराधीन मामले की तथ्यात्मक स्थिति उस निर्णय की स्थिति से कैसे मेल खाती है जिस पर भरोसा किया गया है, निम्नानुसार कहा था:-

“8. जैसा कि अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने सही कहा है, हिंदुस्तान पेट्रोलियम मामले में भूमिधारक अधिनियम की धारा 3 और 9 के समान प्रावधानों पर विचार नहीं किया गया था।

9. न्यायालय को किसी निर्णय पर तब तक भरोसा नहीं करना चाहिए जब तक कि वह इस बात पर चर्चा न कर ले कि तथ्यात्मक स्थिति उस निर्णय की तथ्यात्मक स्थिति से कैसे मेल खाती है जिस पर भरोसा किया जा रहा है। न्यायालयों की टिप्पणियों को न तो यूक्लिड के प्रमेयों के रूप में पढ़ा जाना चाहिए और न ही किसी कानून के प्रावधानों के रूप में, और वह भी उनके संदर्भ से अलग करके। इन टिप्पणियों को उस संदर्भ में पढ़ा जाना चाहिए जिसमें वे कही गई प्रतीत होती हैं। न्यायालयों के निर्णयों को कानून के रूप में नहीं माना जाना चाहिए। किसी कानून के शब्दों, वाक्यांशों और प्रावधानों की व्याख्या करने के लिए, न्यायाधीशों के लिए लंबी चर्चाओं में शामिल होना आवश्यक हो सकता है, लेकिन चर्चा का उद्देश्य व्याख्या करना है, न कि परिभाषित करना। न्यायाधीश कानूनों की व्याख्या करते हैं, वे निर्णयों की व्याख्या नहीं करते। वे कानून के शब्दों की व्याख्या करते हैं; उनके शब्दों की व्याख्या कानून के रूप में नहीं की जानी चाहिए। लंदन ग्रेविंग डॉक कंपनी लिमिटेड बनाम हॉर्टन मामले में लॉर्ड डरमांट ने टिप्पणी की: (ऑल ईआर पृष्ठ 14 सीडी)

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



यह मामला, जाहिर सी बात है, केवल विल्स, जे. के शब्दों को ऐसा मानकर कि वे किसी संसद के अधिनियम का हिस्सा हैं और उन पर लागू व्याख्या के नियमों को अपनाकर, इस मामले को हल नहीं किया जा सकता। इससे उस प्रतिष्ठित न्यायाधीश द्वारा वास्तव में प्रयुक्त भाषा के महत्व को कम नहीं आंका जा सकता।

10. गृह कार्यालय बनाम डोरसेट याच कंपनी (ऑल ईआर पृष्ठ 297जी-एच) में लॉर्ड रीड ने कहा, "लॉर्ड एटकिन के भाषण को वैधानिक परिभाषा की तरह नहीं माना जाना चाहिए।" नई परिस्थितियों में इसमें योग्यता की आवश्यकता होगी। शेफर्ड होम्स लिमिटेड बनाम सैंडहैम (संख्या 2) में न्यायमूर्ति मेगरी ने टिप्पणी की: "किसी को भी रसेल, एलजे के आरक्षित निर्णय को भी संसद के अधिनियम की तरह नहीं समझना चाहिए।" और, हेरिंगटन बनाम ब्रिटिश रेलवे बोर्ड में लॉर्ड मॉरिस ने कहा: (ऑल ईआर पृष्ठ 761सी)

"भाषण या निर्णय के शब्दों को विधायी अधिनियम के शब्दों की तरह मानना हमेशा जोखिम भरा होता है, और यह याद रखना चाहिए कि न्यायिक कथन किसी विशेष मामले के तथ्यों के संदर्भ में किए जाते हैं।"

11. परिस्थितिजन्य लचीलापन, एक अतिरिक्त या भिन्न तथ्य दो मामलों में निष्कर्षों के बीच बहुत बड़ा अंतर पैदा कर सकता है। किसी निर्णय पर अंधाधुंध भरोसा करके मामलों का निपटारा करना उचित नहीं है।

12. पूर्व निर्णयों को लागू करने के मामले में न्यायमूर्ति हिदायतुल्ला के निम्नलिखित शब्द सर्वश्रेष्ठ उदाहरण बन गए हैं: (अब्दुल कयूम बनाम सीआईटीएस, एआईआर पृष्ठ 688, परिच्छेद 19)

"19. प्रत्येक मामला अपने तथ्यों पर निर्भर करता है और एक मामले और दूसरे मामले के बीच घनिष्ठ समानता पर्याप्त नहीं है क्योंकि एक भी महत्वपूर्ण विवरण पूरे पहलू को बदल सकता है। ऐसे मामलों का निर्णय करते समय, कार्डोजो के शब्दों में, एक मामले के रंग की दूसरे मामले से तुलना करके निर्णय लेने के प्रलोभन से बचना चाहिए। इसलिए, यह तय करने

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



के लिए कि कोई मामला किस पक्ष में आता है, दूसरे मामले से व्यापक समानता बिल्कुल भी निर्णायक नहीं है।”

“पूर्व उदाहरणों का पालन केवल तभी तक किया जाना चाहिए जब तक वे न्याय का मार्ग दिखाते हों, लेकिन आपको बेकार की चीजों को हटाना होगा और अनावश्यक शाखाओं को छांटना होगा अन्यथा आप घने जंगलों और शाखाओं में खो जाएंगे। मेरी गुज़ारिश है कि न्याय के मार्ग को उन बाधाओं से मुक्त रखा जाए जो इसमें रुकावट डाल सकती हैं।”

44. यदि हम **उत्तर प्रदेश राज्य बनाम हरि राम, (2013) 4 एससीसी 280** के मामले में तथ्यों की जांच करें, तो हम पाते हैं कि उक्त मामले में, भूमिधारक के विरुद्ध अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही शुरू की गई थी। 19.06.1999 को, निर्धारित प्राधिकारी ने अधिनियम, 1976 की धारा 10 (5) के तहत एक नोटिस जारी किया, जिसमें भूमिधारक को अधिशेष घोषित भूमि का कब्जा विधिवत अधिकृत व्यक्तियों को सौंपने का निर्देश दिया गया था। इससे व्यथित होकर, भूमिधारक ने अधिनियम, 1976 की धारा 33 के तहत अपील दायर की, जिसमें तर्क दिया गया कि अधिनियम, 1976 की धारा 8 (3) के तहत परिकल्पित कोई नोटिस उसे तामील नहीं किया गया था। अपील को दिनांक 14.12.1999 के निर्णय और आदेश के द्वारा स्वीकार कर लिया गया था। 29.06.1981 को अधिनियम, 1976 की धारा 8(4) के तहत पारित आदेश को रद्द कर दिया गया था। अपील में पारित आदेश से असंतुष्ट होकर राज्य ने इसे रिट याचिका में चुनौती दी थी, लेकिन अंततः अपील में पारित आदेश को बरकरार रखते हुए रिट याचिका खारिज कर दी गई। इसके बाद राज्य ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय का रुख किया। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अधिनियम, 1976 और निरसन अधिनियम, 1999 के विभिन्न प्रावधानों पर विचार करते हुए उच्च न्यायालय के फैसले में कोई खामी नहीं पाई और तदनुसार अन्य अपीलों के साथ अपील को भी खारिज कर दिया। यहां यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि निरसन अधिनियम, 1999 उत्तर प्रदेश राज्य में 18.03.1999 को लागू हुआ था और उक्त मामले में धारा 10(5) के तहत नोटिस इसके बाद 19.06.1999 को जारी किया गया था।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



45. **ए.पी. इलेक्ट्रिकल इक्विपमेंट कॉर्पोरेशन बनाम तहसीलदार और अन्य, 2025**

एससीसी ऑनलाइन एससी 447 के मामले में दिनांक 08.02.2008 को धारा 10 (6) के तहत पंचनामा तैयार किया गया था और राज्य ने दावा किया कि इसके अनुसरण में भूमि पर कब्जा ले लिया गया था। हालांकि, भूमिधारक (मेसर्स एपी इलेक्ट्रिकल इक्विपमेंट कॉर्पोरेशन) का कहना था कि राज्य ने केवल प्रतीकात्मक कब्जा लिया था और वास्तविक कब्जा भूमिधारक के पास ही बना रहा। इसी बीच, आंध्र प्रदेश राज्य में 22.04.2008 को 27.03.2008 से प्रभावी तिथि से निरसन अधिनियम, 1999 लागू हो गया। लगभग वर्ष 2009 में राज्य अधिकारियों ने भूमि पर कब्जा लेने का प्रयास किया और भूमिधारक ने एक रिट याचिका दायर करके इस कार्रवाई को चुनौती दी। इस प्रकार दायर की गई रिट याचिका अंततः स्वीकार कर ली गई, जिसमें यह माना गया कि भूमिधारक विवादित भूमि पर भौतिक कब्जे में बना हुआ है। इसके बाद राज्य, उच्च न्यायालय की खंडपीठ पहुंचा और दायर की गई अपील को भी अंततः स्वीकार कर लिया गया, क्योंकि यह माना गया कि माननीय एकल न्यायाधीश ने अधिनियम, 1976 की धारा 10(5) के तहत दिनांक 05.01.2008 को जारी नोटिस और दिनांक 08.02.2008 के पंचनामा को कानून की दृष्टि से प्रारंभ से ही अमान्य घोषित करने में तथ्यों और कानून दोनों में त्रुटि की थी। अपील में पारित आदेश से असंतुष्ट होकर भूमिधारक ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय का रुख किया और अंततः माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस संबंध में निर्धारित कानून पर विचार करते हुए अपील में पारित आदेश को रद्द करते हुए उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश के फैसले को बरकरार रखा।

46. वर्तमान याचिकाओं के समूह पर निर्णय सुरक्षित रखे जाने के बाद, याचिकाकर्ताओं ने अपने मामले के समर्थन में सर्वोच्च न्यायालय के हालिया फैसले, **दलसुखभाई बाचूभाई सतासिया और अन्य बनाम गुजरात राज्य और अन्य, एआईआर 2026 एससी 475** को प्रस्तुत किया है।

47. उक्त मामले में शामिल तथ्यों से पता चलता है कि मूल भूमिधारक द्वारा अधिनियम, 1976 की धारा 6(1) के तहत हदबंदी विवरणी को दाखिल किया गया था। इसके

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



बाद अधिनियम, 1976 की धारा 21 के तहत शुरू की गई कार्यवाही में और दिनांक 18.02.1980 के आदेश के माध्यम से सक्षम प्राधिकारी ने अन्य बातों के साथ यह माना था कि सर्वेक्षण संख्या 339 में शामिल भूमि हदबंदी सीमा के भीतर थी और इस प्रकार मूल भूमिधारी के परिवार के सदस्यों द्वारा कोई अतिरिक्त भूमि धारित नहीं थी। इसके बाद एक संस्था ने विशेष वसूली अधिकारी द्वारा 28.04.1981 को आयोजित सार्वजनिक नीलामी में सर्वेक्षण संख्या 339 की भूमि खरीदी। नीलामी की पुष्टि हुई और संस्था का नाम अधिकार अभिलेखों में दर्ज किया गया। संस्था ने सूरत नगर निगम से औद्योगिक इकाइयों के निर्माण के लिए निर्माण अनुमति प्राप्त की। इसके बाद कई उप-भूखंड धारकों-अपीलकर्ताओं को कब्जे की रसीदें जारी की गईं, जो वर्ष 1983-84 से उक्त उप-भूखंडों पर कब्जा बनाए हुए थे। उक्त भूखंड धारकों ने उक्त भूमि पर औद्योगिक इकाइयां विकसित की थीं।

48. इसी बीच 12.10.1984 को सहायक समाहर्ता ने संस्था के पक्ष में दर्ज उत्पत्ति प्रविष्टि को इस आधार पर रद्द कर दिया कि 28.04.1981 की सार्वजनिक नीलामी अधिनियम, 1976 के प्रावधानों के अनुसार आयोजित नहीं की गई थी। इस आदेश को समाहर्ता के समक्ष अपील में चुनौती दी गई, लेकिन अपील भी खारिज कर दी गई। इसके बाद राजस्व विभाग के सहायक सचिव के समक्ष दायर पुनरीक्षण याचिका भी खारिज कर दी गई। गुजरात सरकार ने 3 मई, 1988 को अधिनियम, 1976 की धारा 34 के तहत पुनरीक्षण की शक्ति का प्रयोग करते हुए सक्षम प्राधिकारी द्वारा अधिनियम 1976 की धारा 21 के तहत पारित दिनांक 18 फरवरी, 1980 के आदेश को रद्द कर दिया तथा सर्वेक्षण संख्या 339 से संबंधित अतिरिक्त भूमि के प्रश्न पर पुनर्विचार के लिए मामले को सक्षम प्राधिकारी को वापस भेज दिया गया। इसके बाद, 16.01.1989 को सक्षम प्राधिकारी ने एक आदेश पारित कर सर्वेक्षण संख्या 339 में कुल 9303 वर्ग मीटर भूमि में से 662.18 वर्ग मीटर भूमि को "अतिरिक्त भूमि" घोषित किया। 22.11.1990 को अधिनियम, 1976 की धारा 10(5) के तहत मूल भूमिधारक को नोटिस जारी कर अतिरिक्त भूमि को खाली करने और उसका कब्जा सौंपने का निर्देश दिया गया। इसके

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



फलस्वरूप, 21.01.1992 को 662.18 वर्ग मीटर अतिरिक्त भूमि का कब्जा लेने के लिए पंचनामा जारी किया गया।

49. जब कुछ उप-भूखंड धारकों-अपीलकर्ताओं ने अपने उप-भूखंडों को दोबारा बेचने का प्रयास किया, तब सक्षम प्राधिकारी ने दिनांक 20.06.2007 और 05.07.2008 को पत्र भेजकर बाद की बिक्री के लिए अनापत्ति प्रमाण पत्र जारी करने से इनकार कर दिया। इसका कारण यह बताया गया कि निर्मित इकाइयाँ कथित अतिरिक्त भूमि पर स्थित थीं और उक्त अतिरिक्त भूमि 21.01.1992 से सरकार द्वारा अधिग्रहित कर ली गई थी और इसलिए सरकार के अधीन थी। तभी उप-भूखंड धारकों-अपीलकर्ताओं को पहली बार पता चला कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा उक्त संपत्ति को अतिरिक्त भूमि घोषित कर दिया गया था। परिणामस्वरूप, वर्ष 2009 में गुजरात उच्च न्यायालय में उप-भूखंडों की बिक्री के लिए आवश्यक अनापत्ति प्रमाण पत्र जारी करने के निर्देश की मांग करते हुए एक रिट याचिका दायर की गई। उक्त उप-भूखंडों के भूमि उपयोग के संबंध में वर्ष 2010 में एक अन्य रिट याचिका दायर की गई।

50. उक्त निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय ने तथ्यात्मक विवाद पर विचार करते हुए निम्नलिखित कहा था:

“22....

22.1... अपीलकर्ताओं द्वारा आगे की बिक्री के लिए 'अनापत्ति प्रमाण पत्र' मांगने पर ही उन्हें पता चला कि 'अतिरिक्त भूमि' राज्य सरकार द्वारा अधिग्रहित कर ली गई थी और उनके पास निहित हो गई थी। इसलिए, उन्होंने उच्च न्यायालय में रिट याचिका दायर की, जिसे खारिज कर दिया गया।

22.2 यूएलसी अधिनियम की धारा 10 (5) के तहत मूल मालिकों को नोटिस जारी किए जाने से यह तात्पर्य है कि प्रतिवादियों को पता था कि यूएलसी अधिनियम की धारा 10 के अनुसार उक्त भूमि का कब्जा लिया जाना था। यह इस तथ्य की पुष्टि किए बिना किया गया

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



था कि उक्त भूमि का कब्जा अपीलकर्ताओं के पास था, लेकिन अपीलकर्ताओं को कोई नोटिस जारी नहीं किया गया था, जो वास्तव में उक्त भूमि पर कब्जा किए हुए थे।

22.3 उपरोक्त स्थापित कानून को वर्तमान तथ्य पर लागू करते हुए, हम अभिलेख के आधार पर निम्नलिखित तथ्य पाते हैं:

(क) निरसन अधिनियम के समय अपीलकर्ता प्रश्नगत उप-भूखंडों पर वास्तविक कब्जे में थे।

(ख) 22.11.1990 को धारा 10(5) के तहत राज्य सरकार को कब्जे के हस्तांतरण के संबंध में मूल भूस्वामी को नोटिस जारी किया गया था, न कि अपीलकर्ताओं को, जो संबंधित उप-भूखंडों पर कब्जे में थे।”

51. अतः, उक्त मामले में विवाद के तथ्यात्मक पहलू पर विचार करते हुए, इस तथ्य पर कोई विवाद नहीं था कि निरसन अधिनियम, 1999 के लागू होने के समय अपीलकर्ता वास्तव में भूमि पर कब्जे में थे। इसके अलावा, अपीलकर्ताओं को पहली बार इस बात का पता तब चला जब अनापत्ति प्रमाण पत्र अस्वीकार कर दिए गए और इसके तुरंत बाद अपीलकर्ताओं ने उच्च न्यायालय का रुख किया। अंत में, धारा 10 (5) के तहत नोटिस मूल भूमिधारक को जारी किया गया था, अपीलकर्ताओं को नहीं, और यह भी विवादित नहीं है कि प्रश्नगत भूमि पर अधिकार अपीलकर्ताओं के पक्ष में हस्तांतरित हो गए थे।

52. इस प्रकार, इसमें कोई संदेह नहीं है कि उक्त मामले में विवाद का विषय वर्तमान कार्यवाही से बहुत अलग था, क्योंकि निरसन अधिनियम, 1999 के लागू होने के समय भूमि पर कब्जे को लेकर कोई विवाद नहीं था और उच्च न्यायालय में जाने में देरी का प्रश्न भी शामिल नहीं था। इसके अलावा, उप-आवंटितों को प्रश्नगत भूमि पर स्वतंत्र अधिकार प्राप्त थे और उन्हें अधिनियम, 1999 के तहत कार्यवाही की कोई जानकारी नहीं थी। हालांकि, वर्तमान मामले में धारा 10 (5) के तहत नोटिस मूल भूमि धारकों को जारी किया गया था, याचिकाकर्ता मूल भूमि धारक के वंशज हैं और मूल भूमि धारकों के माध्यम से अपने अधिकारों का दावा कर रहे हैं।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

इसके अलावा, मूल भूमिधारकों को भी अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही के किसी न किसी चरण में नोटिस दिया गया था और उन्होंने हदबंदी विवरणी भी दाखिल किए थे, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि उन्हें अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही की जानकारी नहीं थी।

53. फिर भी, उक्त मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की थी:-

“20. हम ए.पी. इलेक्ट्रिकल मामले में इस न्यायालय के इस दृष्टिकोण से सहमत हैं, जिसमें भास्कर ज्योति शर्मा (2015 एआईआर एससीडब्लू 548) के हरि राम (एआईआर 2013 एससी 1793) के आदेश पर प्रभाव के बारे में बताया गया है। पहले मामले में, वास्तविक कब्जा वास्तव में राज्य सरकार को हस्तांतरित कर दिया गया था। हालांकि, यह यूएलसी अधिनियम की धारा 10 (5) के तहत अनिवार्य रूप से नोटिस जारी करने की आवश्यकता के उल्लंघन में बलपूर्वक किया गया था। इस संबंध में, इस न्यायालय ने माना कि यदि धारा 10 (5) के अनुपालन न करने के संबंध में आपति उचित समय सीमा के भीतर नहीं उठाई जाती है तो इस प्रकार आपति करने का अधिकार "त्याग दिया जाता है।”

54. अतः, यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ताओं द्वारा उपरोक्त तीनों मामलों में, यह माना गया था कि निरसन अधिनियम, 1999 के लागू होने के समय भूमिधारक खाली भूमि पर कब्जा रखता था। इसके अलावा, भूमिधारक द्वारा किसी भी प्रकार से अपने अधिकारों का त्याग करने या रिट न्यायालय में देरी से याचिका दायर करने का प्रश्न भी विवाद का विषय नहीं था। वास्तव में, पीड़ित पक्ष ने कार्रवाई का कारण उत्पन्न होने के थोड़े समय के भीतर ही उच्च न्यायालय से संपर्क किया था। इस प्रकार, याचिकाकर्ताओं द्वारा जिन तीन निर्णयों का हवाला दिया है, उनमें इस प्रश्न पर विचार नहीं किया गया था कि क्या भूमिधारक द्वारा न्यायालय में आने में देरी और लापरवाही के कारण रिट याचिकाएं के खारिज हो सकती हैं।

55. यहां यह उल्लेख किया गया है कि प्रतिवादियों ने **असम राज्य बनाम भास्कर ज्योति शर्मा और अन्य, 2015 (5) एससीसी 321** मामले का हवाला दिया है। उस मामले में असम राज्य द्वारा यह तर्क दिया गया था कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा भौतिक कब्जा ले लिया

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



गया था और भूस्वामी की ओर से यह तर्क दिया गया था कि अधिनियम, 1976 की धारा 10 (5) के तहत निर्धारित प्रक्रिया का पालन नहीं किया गया था। अधिनियम, 1976 की धारा 10 (6) के तहत कब्जा लेने से पहले, धारा 10 (5) के तहत अधिसूचना आवश्यक थी; इस प्रकार निरसन अधिनियम, 1999 की धारा 3 के तहत कोई कब्जा नहीं लिया गया है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष प्रश्न यह था कि क्या सक्षम प्राधिकारी द्वारा वास्तव में भौतिक कब्जा ले लिया गया था। असम राज्य ने यह तर्क दिया कि यद्यपि 1991 में कब्जा ले लिया गया था, संभवतः यह एकतरफा और भूमि मालिक को बिना सूचना दिए किया गया था। यह तर्क दिया गया कि मात्र धारा 10(5) का अनुपालन न करना निरसन अधिनियम, 1999 की धारा 3 के प्रावधानों को लागू करने के लिए अपर्याप्त होगा। सर्वोच्च न्यायालय ने भूस्वामी के इस तर्क को खारिज करते हुए कहा:-

“14. हम ऐसा इसलिए कहते हैं क्योंकि सामान्य तौर पर कब्जेदार से वास्तविक भौतिक कब्जा तभी लिया जा सकता है जब उसे धारा 10(5) के तहत नोटिस जारी कर राज्य सरकार, अधिकृत अधिकारी या सक्षम प्राधिकारी को कब्जा सौंपने के लिए कहा जाए। इस प्रक्रिया में पर्याप्त तर्कसंगतता है क्योंकि कब्जेदार को बेदखल करने के लिए बल प्रयोग की आवश्यकता सामान्यतः तभी उत्पन्न होनी चाहिए जब संबंधित व्यक्ति सहयोग करने और संबंधित भूमि का कब्जा सौंपने या देने से इनकार कर दे। यही अधिनियम की धारा 10(5) और 10(6) का आधार है। लेकिन यदि किसी कारणवश सक्षम प्राधिकारी, सरकार या अधिकृत अधिकारी स्वैच्छिक समर्पण या कब्जा सौंपने की संभावना तलाशे बिना ही पूर्ववर्ती स्वामी को जबरन बेदखल कर देते हैं तो क्या स्थिति होगी? क्या बल का ऐसा प्रयोग स्वयं बेदखली को अमान्य कर देगा या यह केवल एक अनियमितता होगी जो पीड़ित स्वामी या कब्जेदार को बहाली की मांग करने के लिए कार्रवाई का कारण बनेगी, लेकिन उसे नोटिस जारी करने के बाद फिर से बेदखल कर दिया जाएगा? यही वह पहलू है जिसने हमें कुछ हद तक परेशान किया है।

15. उच्च न्यायालय ने माना है कि कथित बेदखली अधिनियम की धारा 10(5) के तहत किसी भी नोटिस से पहले नहीं हुई थी। यदि ऐसा मान भी लिया जाए तो इसका मतलब केवल

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



यह होगा कि 7-12-1991 को जब पूर्ववर्ती स्वामी को प्रश्नगत भूमि से बेदखल किया गया था, वह धारा 10(5) के आधार पर शिकायत दर्ज करा सकता था और कब्जे की बहाली की मांग भी कर सकता था, भले ही ऐसी बहाली के बाद कब्जा सौंपने या समर्पण करने में विफल रहने पर उसे अधिनियम की धारा 10(5) और 10(6) के तहत फिर से बेदखल किया जा सकता था। इसलिए, वास्तव में, जब तक कि कोई ऐसी बात न हो जो अधिग्रहण की प्रक्रिया को ही प्रभावित करती हो, जैसे कि भूमि की पहचान या उसकी सीमाएं या इसी तरह की कोई अन्य परिस्थिति जो मामले की जड़ तक जाती हो और जिसके लिए न्यायनिर्णय की आवश्यकता हो, धारा 10(3) के तहत अधिशेष घोषित होने के कारण अपनी भूमि खो चुके व्यक्ति को धारा 10(5) के उल्लंघन के खिलाफ आवाज उठाना उचित नहीं लगेगा, क्योंकि वह अच्छी तरह समझता है कि भले ही न्यायालय उसकी इस दलील को मान ले कि निर्धारित प्रक्रिया का पालन किया जाना चाहिए, फिर भी उसके लिए भूमि को अपने पास रखना पर्याप्त नहीं होगा, क्योंकि अधिकारी अगले ही दिन धारा 10(5) के तहत नोटिस जारी करके उसे भूमि से बेदखल कर सकते हैं। इस दृष्टिकोण से, किसी भी मालिक या कब्जेदार के लिए धारा 10(5) के तहत नोटिस न दिए जाने के आधार पर अपने बेदखली को चुनौती देना एक शास्त्र-विषयक अभ्यास मात्र होगा।

16. इस मुद्दे को एक अन्य दृष्टिकोण से भी देखा जा सकता है। यह मानते हुए कि कब्जेदार शिकायत कर सकता है, भले ही अंततः इससे कोई खास लाभ न हो, प्रश्न यह है कि क्या धारा 10(5) के कथित उल्लंघन के काफी समय बाद ऐसी शिकायत की जा सकती है। यदि 7-12-1991 को पूर्ववर्ती भूस्वामी से वास्तविक भौतिक कब्जा ले लिया गया था, जैसा कि वर्तमान मामले में आरोप है, तो धारा 10(5) पर आधारित कोई भी शिकायत ऐसी बेदखली के उचित समय के भीतर की जानी चाहिए थी। यदि मालिक ने ऐसा नहीं किया, तो समय बीतने मात्र से ही जबरन कब्जा लेना वैध हो जाएगा। ऐसी किसी भी स्थिति में, स्वामी या कब्जेदार को अधिनियम की धारा 10(5) के तहत अपने अधिकार का त्याग किया हुआ माना जाएगा। हमारे विचार में, कोई अन्य दृष्टिकोण किसी वादी को शिकायत करने की छूट देगा, इसलिए नहीं

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



कि उसे कोई वास्तविक नुकसान हुआ है जिसका निवारण किया जाना आवश्यक है, बल्कि इसलिए कि निरसन अधिनियम की आकस्मिक परिस्थिति ने उसे निर्धारित प्रक्रिया के उल्लंघन के रूप में अपने बेदखली के मुद्दे को उठाने के लिए प्रेरित किया है।

17. प्रतिवादियों ने हरि राम मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया। हमारे विचार में, वह निर्णय प्रतिवादियों को अधिक सहायता प्रदान नहीं करता है। हम ऐसा इसलिए कहते हैं, क्योंकि हरि राम मामले में यह न्यायालय इस बात पर विचार कर रहा था कि क्या धारा 10(5) में प्रयुक्त शब्द "सकता है" सक्षम प्राधिकारी को धारा 10(6) के तहत प्रश्नगत भूमि का भौतिक कब्जा लेने से पहले नोटिस जारी करने या न करने का विवेकाधिकार देता है। उस मामले में यह प्रश्न पोषणीय नहीं था कि धारा 10(5) का उल्लंघन और बिना सूचना के संभावित बेदखली से बेदखली की कार्रवाई स्वयं ही अमान्य हो जाएगी या विधि की दृष्टि में उसका अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा। हमारी राय में, धारा 10(5) में एक सामान्य और तार्किक कार्यप्रणाली का वर्णन है जिसका पालन अधिकारियों द्वारा धारा 10(6) के तहत कब्जेदार को बेदखल करने के लिए बल प्रयोग करने से पहले किया जाना चाहिए। वर्तमान मामले में, यदि दिसंबर 1991 में पूर्ववर्ती स्वामी की बेदखली के संबंध में अपीलकर्ता का विवरण सही है, तो यह तथ्य कि ऐसी बेदखली धारा 10(5) के तहत बिना सूचना के की गई थी, कोई मायने नहीं रखेगा और निरसन अधिनियम की धारा 3 के प्रयोजनों के लिए कब्जे लेने की कार्रवाई को अमान्य या समाप्त नहीं करेगा। ऐसा इसलिए है क्योंकि पूर्व स्वामी भाबदेव शर्मा ने अपने जीवनकाल में किसी भी स्तर पर धारा 10(5) के उल्लंघन के आधार पर कोई शिकायत नहीं की थी, जिसका अर्थ यह है कि उन्होंने ऐसा करने के अपने अधिकार को त्याग दिया था।”

56. **असम राज्य बनाम भास्कर ज्योति शर्मा और अन्य** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णय पर इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने **शिव राम सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य, 2015 एससीसी ऑनलाइन ऑल 8853** के मामले में भी भरोसा किया है, जिसमें इस न्यायालय ने विलंब और लापरवाही के आधार पर रिट याचिका को खारिज करते हुए निम्नलिखित कहा था:-

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



“10. हमें मामले के एक अन्य पहलू पर भी ध्यान देना चाहिए, विशेष रूप से भास्कर ज्योति शर्मा (पूर्वोक्त) में सर्वोच्च न्यायालय के हाल के निर्णय को ध्यान में रखते हुए। याचिकाकर्ता ने निरसन अधिनियम के लागू होने के लगभग तीन साल बाद 2002 में पहली रिट याचिका दायर की थी। पिछली रिट याचिका का निपटारा करते हुए जिला मजिस्ट्रेट को याचिकाकर्ता के अभ्यावेदन पर आदेश पारित करने का निर्देश दिया गया था, जिसके बाद जिला मजिस्ट्रेट ने 10 मई 2007 को आदेश पारित किया। इसके बाद याचिकाकर्ता ने दो साल से अधिक समय तक प्रतीक्षा की, जब तक कि उसने जुलाई 2009 में वर्तमान रिट याचिका दायर नहीं की। यदि याचिकाकर्ता को धारा 10(5) के तहत उचित नोटिस दिए बिना भूमि से बेदखल किया गया था, तो ऐसी शिकायत उस समय उठाई जा सकती थी। वास्तव में, राज्य का शुरु से ही यह कहना रहा है कि धारा 10(5) के तहत नोटिस वास्तव में इस मामले में जारी किया गया था, जो न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत मूल दस्तावेज से सिद्ध होता है। मुद्दा यह है कि क्या इतनी लंबी अवधि के बाद न्यायालय के समक्ष ऐसी शिकायत उठाई जा सकती थी। याचिकाकर्ता ने निरसन अधिनियम के लागू होने के लगभग तीन साल बाद पहली रिट याचिका दायर की और उसके बाद जिला मजिस्ट्रेट द्वारा 25 जून, 1993 को कब्जा लेने के निष्कर्ष के बावजूद अभ्यावेदन के निपटारे के बाद दो साल से अधिक समय तक प्रतीक्षा की। हमारी राय में, इस तरह की विलंबित चुनौती को किसी भी स्थिति में स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। हालांकि, हम यह भी कहना चाहेंगे कि यह इस तथ्य से बिल्कुल अलग है कि हमारे पास, इस निष्कर्ष से स्वतंत्र रूप से, यह माना गया कि वास्तव में 18 मार्च, 1999 से पहले ही कब्जा ले लिया गया था, जिसके परिणामस्वरूप याचिकाकर्ता निरसन अधिनियम का लाभ प्राप्त करने का हकदार नहीं होगा।”

57. यहाँ यह उल्लेख करना भी प्रासंगिक है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **असम राज्य बनाम भास्कर ज्योति शर्मा और अन्य** के मामले में निर्धारित कानून पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय की एक संविधान पीठ ने **इंदौर विकास प्राधिकरण बनाम मनोहर लाल, (2020) 8 एससीसी 129** के मामले में विचार किया था, यद्यपि उक्त मामले में प्रश्न उचित मुआवजे और

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



पारदर्शिता के अधिकार और भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास और पुनर्स्थापन अधिनियम, 2013 की धारा 24 की व्याख्या से संबंधित था, सर्वोच्च न्यायालय ने **असम राज्य बनाम भास्कर ज्योति शर्मा और अन्य (पूर्वोक्त)** के मामले में निर्णय के परिच्छेद 15 से 17 पर विचार करते हुए निम्नानुसार कहा था:-

“इस न्यायालय ने माना कि निरसन अधिनियम के प्रावधानों को ऐसे मामले में विस्तारित नहीं किया जा सकता है जहाँ प्रक्रिया का पालन किए बिना कब्जा लिया गया हो, और भूस्वामी भूमि को अपने पास नहीं रख सकता है।” इस न्यायालय ने यह भी कहा कि एक बार 1991 में कब्जा ले लिए जाने के बाद, धारा 10 (5) के अनुपालन न होने के संबंध में कोई भी शिकायत बेदखली के उचित समय के भीतर दर्ज की जानी चाहिए थी। समय बीतने के साथ-साथ, उस कब्जे को कानूनी मान्यता मिल जाएगी। इसलिए, मालिक या कब्जेदार व्यक्ति को अधिनियम की धारा 10 (5) के तहत अपने अधिकार का त्याग किया हुआ माना जाना चाहिए। इस न्यायालय ने यह भी कहा कि केवल निरसन अधिनियम की आकस्मिक परिस्थितियों के कारण, जो बेदखली के संबंध में प्रावधान करता है, निर्धारित प्रक्रिया का उल्लंघन है। उपरोक्त निर्णय से यह स्पष्ट है कि ऐसे दावे पर विचार नहीं किया जा सकता है, और विलंबित रूप से उठाए गए ऐसे किसी भी विवाद को इस न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था।”

58. इस संबंध में, सर्वोच्च न्यायालय ने **कपिलाबेन अंबालाल पटेल और अन्य बनाम गुजरात राज्य और अन्य, 2021 (12) एससीसी 95** के मामले में, जहां भूमिधारकों से भूमि का कब्जा लेने के 14 वर्ष बाद रिट याचिका दायर की गई थी, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने उच्च न्यायालय की खंडपीठ के फैसले को बरकरार रखते हुए, अन्य बातों के अलावा विलंब के आधार पर रिट याचिका को खारिज करते हुए निम्नलिखित कहा:-

“17. इसलिए, हमारी राय में, खंडपीठ का यह निष्कर्ष सही था कि अपीलकर्ताओं द्वारा 14 वर्ष की अवधि के बाद दायर की गई रिट याचिका विलंब के कारण पूरी तरह से वर्जित थी

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



और उसमें लापरवाही थी। हम वर्तमान मामले के विशिष्ट तथ्यों में उच्च न्यायालय द्वारा लिए गए उक्त दृष्टिकोण से सहमत हैं।

18. आश्चर्यजनक रूप से, विशेष अनुमति से दायर इस अपील में, खंड पीठ के उक्त निष्कर्ष को चुनौती देने के लिए एक अस्पष्ट आधार उठाया गया है। इसके अलावा, इस संबंध में विशेष अनुमति से दायर अपील में कोई ठोस कानूनी प्रश्न नहीं उठाया गया है। इसके अतिरिक्त, दिए गए सभी आधारों में यह दावा किया गया है कि उच्च न्यायालय ने यह मानने में गलती की कि रिट याचिका दायर करने में 14 वर्ष की देरी हुई थी और इस बात को नज़रअंदाज़ किया कि 1976 अधिनियम की धारा 10 (5) के तहत दिनांक 23.1.1986 को जारी नोटिस अंबालाल परसोतमभाई पटेल को तामील नहीं कराया गया था क्योंकि उनका निधन 31.12.1985 को हो चुका था और उन्हें भेजा गया नोटिस 2.2.1986 को "उक्त स्वामी का निधन हो गया है" टिप्पणी के साथ वापस आ गया था। इसके अलावा, अंबालाल परसोतमभाई पटेल के कानूनी वारिसों को उक्त नोटिस तामील कराया जाना चाहिए था। अब तक बताए गए तथ्यों के आधार पर, हमारी राय में, ये आधार अपीलकर्ताओं के लिए कोई मायने नहीं रखते। प्रतिवादी-राज्य द्वारा प्रस्तुत अभिस्वीकृति से यह स्पष्ट है कि अंबालाल परसोतमभाई पटेल को धारा 10(5) के तहत जारी किया गया पहला नोटिस 26.12.1985 को विधिवत तामील किया गया था। धारा 10(5) के तहत दूसरा नोटिस 23.1.1986 को जारी किए जाने तक अंबालाल परसोतमभाई पटेल का निधन हो चुका था (31.12.1985 को)। दूसरा नोटिस अन्य लोगों, अर्थात् भीखाभाई मंगनभाई पटेल, नटवरभाई भैलाभाई पटेल और जयंतीभाई बाबरभाई पटेल को भी जारी किया गया था। फिर भी, हम उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा दिए गए इस निष्कर्ष को पलटने के इच्छुक नहीं हैं कि अपीलकर्ताओं द्वारा दायर रिट याचिका में अत्यधिक विलंब हुआ था और उसमें लापरवाही बरती गई थी। वर्तमान मामले के तथ्यों के संदर्भ में यही उचित दृष्टिकोण है।

19. प्रतिवादियों ने लार्सन एंड टर्बो लिमिटेड (पूर्वोक्त) मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर भी भरोसा जताया है, जिसमें न्यायालय ने बलवंत नारायण भागदे बनाम एमडी भगवत और अन्य, बलमोकंद खत्री एजुकेशनल एंड इंडस्ट्रियल ट्रस्ट बनाम पंजाब राज्य और

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



तमिलनाडु हाउसिंग बोर्ड बनाम ए. विश्वम (मृत) के कानूनी वारिसों के मामलों में दिए गए स्पष्टीकरण का उल्लेख किया है। इसमें यह स्थापित कानूनी स्थिति बताई गई है कि अनिवार्य अधिग्रहण के तहत भूमि का भौतिक कब्जा लेना कठिन है। इसके अलावा, कब्जा लेने का सामान्य तरीका पंचों की उपस्थिति में पंचनामा तैयार करना और कब्जा लेकर लाभार्थियों को भूमि सौंपना है। इसके बाद, कब्जे को बनाए रखना अवैध या गैरकानूनी कब्जे के समान होगा। भास्कर ज्योति शर्मा (पूर्वोक्त) के अनुच्छेद 14 से 16 पर भी भरोसा जताया गया है। हालांकि, इन पहलुओं पर विस्तार से चर्चा करना हमारे लिए आवश्यक नहीं है, क्योंकि हम उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा दिए गए निष्कर्ष से सहमत हैं कि 20.3.1986 के कब्जे के पंचनामा पर सवाल उठाने की सीमित राहत के साथ अपीलकर्ताओं द्वारा वर्ष 2001 में दायर की गई रिट याचिका विलंब से ग्रस्त थी। उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने गौर किया कि संबंधित एकल न्यायमूर्ति ने मामले के इस अहम पहलू को पूरी तरह से नज़रअंदाज़ कर दिया था, और हमें उस निष्कर्ष से अलग होने का कोई कारण नहीं दिखता।”

59. आगे यह भी बताया गया है कि जहां तक रिट याचिका दायर करने में देरी का प्रश्न है, सर्वोच्च न्यायालय ने **मारिनमोय मैती बनाम छंद कोले और अन्य (2024) 15 एससीसी 215** के मामले में, जो कि हालांकि 1976 के अधिनियम के तहत कार्यवाही से संबंधित नहीं है, निम्नलिखित निर्णय दिया था:

“9. प्रतिपक्षों की दलीलें सुनने और वर्तमान मामले में प्राप्त तथ्यों का अवलोकन करने के बाद, हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि रिट याचिकाकर्ता को गैर-न्यायसंगत घोषित किया जाना चाहिए था या दूसरे शब्दों में, रिट याचिका को देरी और निष्क्रियता के आधार पर खारिज कर दिया जाना चाहिए था। जो आवेदक अदालत में देर से आता है या दूसरे शब्दों में, काफी समय तक अपने अधिकारों के प्रति उदासीन रहता है, उसे रिट न्यायालयों द्वारा असाधारण राहत नहीं दी जानी चाहिए। इस न्यायालय ने बार-बार यह माना है कि विलंब न्याय को विफल कर देता है। विलंब या लापरवाही उन कारकों में से एक है जिन्हें भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत विवेकाधीन शक्तियों का प्रयोग करते समय उच्च न्यायालय को ध्यान में रखना

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



चाहिए। किसी विशेष मामले में, उच्च न्यायालय अपनी असाधारण शक्तियों का प्रयोग करने से इनकार कर सकता है यदि आवेदक द्वारा अपने अधिकार का दावा करने में ढिलाई बरतने के कारण वाद का कारण समाप्त हो गया हो और बाद में समाप्त हो चुके वाद के कारण को पुनः प्रज्वलित करने का प्रयास किया गया हो।

10. विवेक का प्रयोग सावधानी और सतर्कता के साथ किया जाना चाहिए। यदि रिट न्यायालय में आने में हुई देरी का स्पष्टीकरण दिया जाता है जो न्यायालय के की अंतःरात्मा को प्रभावित करता है, तो ऐसी परिस्थितियों में प्रतिवादी पक्ष द्वारा यह खंडन नहीं किया जा सकता कि भविष्य में विलंब को क्षमा नहीं किया जाएगा। असाधारण क्षेत्राधिकार के प्रयोग को जन्म देने वाली असंख्य परिस्थितियाँ हो सकती हैं और यह सब प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है, इसे गणितीय सटीकता के साथ एक सरल सूत्र में वर्णित नहीं किया जा सकता है। रिट न्यायालय द्वारा प्रयोग किया जाने वाला अंतिम विवेक उन तथ्यों पर निर्भर करता है जिनका उसे सामना करना पड़ता है या उन तथ्यों की पृष्ठभूमि पर निर्भर करता है।

11. रिट याचिका दायर करने के लिए, निस्संदेह कोई निश्चित समय सीमा निर्धारित नहीं है। हालांकि, जब रिट न्यायालय के असाधारण क्षेत्राधिकार का मामला हो, तो यह देखना होगा कि क्या उचित समय के भीतर इसका प्रयोग किया गया है और यहां तक कि जापन प्रस्तुत करने से भी मृत कारण को पुनर्जीवित नहीं किया जा सकता है या उस कारण को पुनर्जीवित नहीं किया जा सकता है जो स्वाभाविक रूप से समाप्त हो चुका है। ऐसी परिस्थितियों में, केवल विलंब और लापरवाही के आधार पर ही अपील खारिज कर दी जानी चाहिए या आवेदक को अयोग्य घोषित कर दिया जाना चाहिए। यदि यह पाया जाता है कि रिट याचिकाकर्ता विलंब और लापरवाही का दोषी है, तो उच्च न्यायालय को केवल इसी आधार पर याचिका खारिज कर देनी चाहिए, रिट अदालतों को ऐसे आलसी वादी को अपने ही अन्याय का फायदा उठाने की अनुमति नहीं देनी चाहिए। यह सत्य है कि मौलिक अधिकार का कोई त्याग नहीं हो सकता, लेकिन अनुच्छेद 226 के तहत विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते समय,

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



उच्च न्यायालय को अनिवार्य रूप से रिट न्यायालय में आवेदक द्वारा की गई देरी और चूक को ध्यान में रखना होगा..."

60. यहां यह भी उल्लेख करना प्रासंगिक है कि इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने रिट सी संख्या 38977/2022 (मिठाई लाल और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) में, जहां अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही को समाप्त करने और राजस्व अभिलेखों में सुधार की राहत इस आधार पर मांगी गई थी कि याचिकाकर्ता प्रश्नगत भूमि पर कब्जे में थे और अधिनियम, 1976 की धारा 10 (6) के तहत कोई कार्यवाही शुरू नहीं की गई थी, 16.02.2023 के निर्णय और आदेश के माध्यम से देरी के आधार पर रिट याचिका को खारिज कर दिया था, जिसमें यह कहा गया था:-

"19. उपरोक्त कारणों से और माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भास्कर ज्योति शर्मा (पूर्वोक्त), कपिलाबेन अंबालाल पटेल (पूर्वोक्त) मामलों में दिए गए निर्णयों तथा इस न्यायालय की एक समवर्ती पीठ द्वारा शिव राम सिंह (पूर्वोक्त) मामले में दिए गए निर्णय के मद्देनजर, हमें इस याचिका में कोई योग्यता नहीं दिखती। यह याचिका अत्यधिक समय-बाधित भी है और इसमें अत्यधिक विलंब का कोई कारण नहीं बताया गया है।

20. परिणामस्वरूप, याचिका खारिज की जाती है।"

61. इसी तरह का मत इस न्यायालय ने रिट याचिका संख्या 32784/2023 (राम राज और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) में भी व्यक्त किया था, जिसका निर्णय 31.10.2023 को हुआ था, जहाँ भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने के लगभग 42 वर्ष बाद याचिका दायर की गई थी और न्यायालय ने विलंब के आधार पर याचिका खारिज कर दी थी। इसी प्रकार, रिट सी संख्या 29968/2018 (गंगा सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) में भी, जिसका निर्णय 05.09.2018 को हुआ था, जहाँ कब्जा लेने के लगभग 33 वर्ष बाद याचिका दायर की गई थी और विलंब के आधार पर खारिज कर दी गई थी।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



62. जहाँ तक याचिकाकर्ताओं द्वारा अन्य समान रूप से स्थित भूमिधारकों के मामलों में दिए गए निर्णयों के साथ समानता का दावा करने का प्रश्न है, हमारा मानना है कि याचिकाकर्ता किसी भी समानता के हकदार नहीं होंगे क्योंकि याचिकाकर्ताओं के पास प्रतिवादियों द्वारा की गई कार्रवाई को स्वीकार कर लिया गया। इसके अलावा, इस न्यायालय के ध्यान में आए विवाद के पहलुओं पर उक्त निर्णयों में विचार नहीं किया गया। साथ ही, याचिकाकर्ताओं द्वारा विवादित भूमि पर कब्जे के आरोप का प्रतिवादियों द्वारा कड़ा विरोध किया जा रहा है, जबकि जिन निर्णयों पर भरोसा किया गया है, उनमें समानता का दावा करते हुए ऐसा नहीं किया गया था। इस संबंध में, हम माननीय सर्वोच्च न्यायालय के **मेसर्स शोलाइन बनाम कमिशनर ऑफ सर्विस टैक्स (2017) 16 एससीसी 104** मामले में दिए गए निर्णय पर भी भरोसा करते हैं, जिसमें निम्नलिखित कहा गया था:-

“9. उपरोक्त तथ्यों के वर्णन से एक बात स्पष्ट है। संयुक्त आयुक्त ने 27-2-2008 को आदेश पारित किए थे। अपीलकर्ता ने उस आदेश को चुनौती देते हुए कोई वैधानिक अपील दायर नहीं की। रिट याचिका मार्च 2012 में ही दायर की गई थी। इस दौरान, अपीलकर्ता आदेश को चुनौती दिए बिना प्रतिवादियों द्वारा मांगे गए सेवा कर का भुगतान भी कर रहा था। अब अपीलकर्ता इसी विषय से संबंधित अन्य लंबित मुकदमों का लाभ उठाना चाहता है। जब अपीलकर्ता ने मांग को चुनौती नहीं दी थी और अन्य समान मामलों की कार्यवाही को केवल देखता रहा था, तो उन मामलों के निर्णय अपीलकर्ता को रिट याचिका दायर करने का कोई आधार नहीं दे सकते। इस संबंध में कानून बिल्कुल स्पष्ट है।

10. उत्तर प्रदेश राज्य बनाम अरविंद कुमार श्रीवास्तव के मामले में, मुख्य प्रश्न जिसका निर्धारण आवश्यक है, वह यह है कि क्या दिए गए मामले में, न्यायाधिकरण और उच्च न्यायालय का न्यायाधिकरण के पूर्व निर्णय का लाभ देने का दृष्टिकोण सही था, जो सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किए जाने के कारण अंतिम रूप ले चुका था। इस न्यायालय ने कहा कि: (एससीसी पृष्ठ 364, परिच्छेद 23)

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



"23.... हमारे समक्ष प्रतिवादियों ने वर्ष 1996 तक, यानी 9 वर्षों की अवधि तक, इन रद्दीकरण आदेशों को चुनौती नहीं दी। इसका अर्थ है कि उन्होंने अपनी नियुक्तियों को रद्द करना स्वीकार कर लिया था। वे वर्ष 1996 में तभी जागे जब उन्हें पता चला कि कुछ अन्य व्यक्तियों, जिनके नियुक्ति आदेश भी रद्द कर दिए गए थे, को राहत मिल गई है। तब तक नौ वर्ष बीत चुके थे। पूर्व के फैसले में न्यायालय के समक्ष पक्षों को राहत दी गई थी। यह भी बताना प्रासंगिक होगा कि यह प्रतिवादी न तो सेवा में शामिल हुए हैं और न ही उन कर्मचारियों की तरह काम कर रहे हैं जिन्हें न्यायाधिकरण के समक्ष पूर्व मामले में सफलता मिली थी। आज की तारीख में, नियुक्ति रद्द करने के आदेश जारी होने के बाद 27 वर्ष बीत चुके हैं। इसलिए, 9 वर्षों की अवधि के बाद दावा याचिका दायर करने में न केवल अस्पष्ट विलंब और लापरवाही थी, बल्कि आज की तारीख में, यानी 27 वर्षों की अवधि के बाद, जब इनमें से अधिकांश प्रतिवादी लगभग 50 वर्ष या उससे अधिक आयु के होंगे, तो अपीलकर्ताओं को उन्हें नियुक्ति देने का निर्देश देना पूरी तरह से अन्यायपूर्ण होगा।"

11. रूप डायमंड्स बनाम भारत संघ के मामले में, याचिकाकर्ता, जो कि 1982-1983 की एक्जिम नीति के प्रयोजनों के लिए एक मान्यता प्राप्त निर्यात गृह था, को कुछ वस्तुओं के आयात की सुविधा नहीं दी गई, जबकि उसने निर्यात दायित्व का निर्वहन कर दिया था। हालांकि, याचिकाकर्ताओं ने कुछ नहीं किया और निर्यात दायित्व के निर्वहन के चार साल से अधिक समय बाद और अनुज्ञप्ति की समाप्ति के पांच साल बाद उपरोक्त सुविधा का दावा किया। चूंकि इसी तरह के मामलों में, बॉम्बे उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेशों के अनुसार ऐसी सुविधा प्रदान की गई थी, इसलिए याचिकाकर्ताओं ने वर्ष 1986 में एक आवेदन किया, जिसे विभाग ने अस्वीकार कर दिया। इसके बाद याचिकाकर्ताओं ने अस्वीकृति के एक वर्ष बाद संविधान के अनुच्छेद 3 के तहत सर्वोच्च न्यायालय का रुख किया। (रूप डायमंड्स मामले, सर्वोच्च न्यायालय पृष्ठ 360, परिच्छेद 8) याचिका को खारिज करते हुए, इस न्यायालय ने टिप्पणी की:

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



"8. याचिकाकर्ता उन दावों को फिर से उठा रहे हैं जिन्हें उन्होंने कई वर्षों से आगे नहीं बढ़ाया है। याचिकाकर्ता सतर्क नहीं थे, बल्कि निष्क्रिय रहना ही उचित समझते थे और किसी और के मामले का फैसला होने तक तटस्थ रहना पसंद करते थे। उनके मामले की तुलना उस स्थिति से नहीं की जा सकती जहाँ किसी कानून को न्यायालय द्वारा असंवैधानिक और शून्य घोषित कर दिया गया हो, ताकि व्यक्ति बाद में शून्य घोषित किए गए कानून के दबाव में भुगतान की गई धनराशि को वापस प्राप्त कर सकें।"

12. हरियाणा स्टेट हैंडलूम एंड हैंडीक्राफ्ट्स कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम जैन स्कूल संस्था के मामले में, लगभग दो दशकों के बाद भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही को चुनौती दी गई थी। देरी का कारण यह बताया गया कि किसी अन्य पक्ष ने अधिग्रहण को चुनौती दी थी और न्यायालय से स्थगन आदेश प्राप्त कर लिया था, इसलिए याचिका केवल उन कार्यवाही के निपटारे के बाद ही दायर की जा सकती थी। इस न्यायालय ने यह देखते हुए याचिका खारिज कर दी कि अन्य कार्यवाही लंबित होना अधिग्रहण को चुनौती देने का अच्छा आधार नहीं होगा।

13. हैल्सबरी लॉज ऑफ़ इंग्लैंड में निम्नलिखित कहा गया है:

"यह निर्धारित करने में कि क्या विलंब हुआ है जो विलंब की श्रेणी में आता है, विचार किए जाने वाले मुख्य बिंदु हैं:

(i) दावेदार की ओर से सहमति; और

(ii) प्रतिवादी की ओर से स्थिति में कोई भी परिवर्तन।

इस संदर्भ में मौन स्वीकृति का अर्थ किसी अधिकार के उल्लंघन के दौरान चुप रहना नहीं है, बल्कि उल्लंघन पूरा होने के बाद और दावेदार को इसकी जानकारी होने के बाद सहमति देना है। दावेदार को उपाय प्रदान करना अन्यायपूर्ण है, यदि उसने अपने आचरण से ऐसा कार्य किया है जिसे उचित रूप से उस अधिकार के त्याग के समतुल्य माना जा सकता है; या यदि उसने अपने आचरण और लापरवाही से, भले ही उपाय का त्याग न किया हो, दूसरे पक्ष को ऐसी स्थिति में डाल दिया है जिसमें बाद में उपाय का दावा किए जाने पर उसे रखना उचित नहीं

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



होगा। ऐसे मामलों में समय का बीत जाना और विलंब अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं। इन्हीं बातों पर विलंब का सिद्धांत आधारित है।

14. यूपी जल निगम बनाम जसवंत सिंह मामले में, मुद्दा यूपी जल निगम के कर्मचारियों के 60 वर्ष की आयु तक सेवा में बने रहने के अधिकार से संबंधित था।

15. हरविंद्र कुमार बनाम मुख्य अभियंता, कार्मिक मामले में, इस न्यायालय ने पहले ही यह माना था कि ये कर्मचारी वास्तव में 60 वर्ष की आयु तक सेवा में बने रहने के हकदार थे। उपरोक्त निर्णय के बाद, लंबे समय पहले सेवानिवृत्त हो चुके लोगों द्वारा उच्च न्यायालय में कई रिट याचिकाएँ दायर की गईं। पोषणीय प्रश्न यह था कि क्या वे कर्मचारी जिन्होंने अपनी सेवानिवृत्ति के आदेशों को चुनौती नहीं दी, उन्हें स्वीकार कर लिया और सेवानिवृत्ति के बाद के लाभ भी प्राप्त कर लिए, उन्हें हरविंद्र कुमार मामले में दिए गए निर्णय के आलोक में राहत दी जा सकती है। न्यायालय ने विलंब और लापरवाही के सिद्धांत को लागू करते हुए लाभ देने से इनकार कर दिया। यह माना गया कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत विवेकाधीन राहत के प्रयोग में एक महत्वपूर्ण कारक लापरवाही और विलंब है। जब कोई व्यक्ति अपने अधिकारों के प्रति सतर्क नहीं रहता और स्थिति को स्वीकार कर लेता है, उनकी रिट याचिका पर कुछ वर्षों बाद सुनवाई नहीं की जा सकती, इस आधार पर कि उन्हें वही राहत दी जानी चाहिए जो उन लोगों को दी गई थी जो समान परिस्थितियों में थे और अपने अधिकारों के प्रति सतर्क थे और अपनी सेवानिवृत्ति को चुनौती दी थी। न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि: (जसवंत सिंह मामला, एससीसी पृष्ठ 471, अनुच्छेद 13)

"13. ऊपर संक्षेप में दिए गए विधि कथन के मददेनजर, प्रतिवादी दोषी हैं क्योंकि उन्होंने सेवानिवृत्ति को स्वीकार कर लिया और समय रहते इसे चुनौती नहीं दी। यदि वे पर्याप्त सतर्क होते, तो वे अन्य लोगों की तरह इस मामले में रिट याचिकाएँ दायर कर सकते थे। इसलिए, जब भी ऐसा प्रतीत होता है कि याचिकाकर्ताओं ने समय गंवाया या उसे व्यर्थ में व्यतीत किया और रिट याचिकाएँ दायर करने के लिए समय पर कार्रवाई नहीं की, तो ऐसे मामलों में न्यायालय को

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

संबंधित व्यक्ति को राहत देने में बहुत सावधानी बरतनी चाहिए। दूसरे, यह भी ध्यान में रखना होगा कि यदि राहत दी जाती है तो क्या संबंधित व्यक्ति की सहमति या छूट के कारण अन्य पक्षों को नुकसान होगा। वर्तमान मामले में, यदि प्रतिवादियों ने अधिनियम के प्रावधानों का उल्लंघन करने वाली अपनी सेवानिवृत्ति को चुनौती दी होती, तो शायद निगम देनदारी को पूरा करने के लिए धन जुटाने के लिए उचित कदम उठा सकता था, लेकिन अपने अधिकारों का दावा न करके प्रतिवादियों ने समय की बर्बादी की है और कुछ वर्षों के अंतराल के बाद, उन्होंने दो वर्षों के लाभ का दावा करते हुए रिट याचिकाएँ दायर की हैं। इससे निश्चित रूप से निगम को धन जुटाना पड़ेगा, जिसका निगम के वित्तीय प्रबंधन पर गंभीर वित्तीय प्रभाव पड़ेगा। जब ये लोग स्वयं ही अधिकार त्यागने और मौन सहमति देने के दोषी हैं, तो न्यायालय को उनकी सहायता क्यों करनी चाहिए?”

63. इस प्रकार, विवादित मामले के तथ्यात्मक पहलुओं और इस संबंध में निर्धारित कानून को ध्यान में रखते हुए, यह निर्विवाद है कि याचिकाकर्ताओं ने इस न्यायालय में आने के अपने अधिकारों का प्रयोग करने में बिल्कुल भी सतर्कता नहीं बरती। इन परिस्थितियों में यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि याचिकाकर्ताओं ने बिना किसी उचित स्पष्टीकरण के लंबे समय बाद इस न्यायालय का रुख किया है।

64. हालांकि, हम इस तथ्य से अनभिज्ञ नहीं हो सकते कि विवादित भूमि पर कब्जे को लेकर पक्षों के बीच एक गंभीर विवाद मौजूद है। याचिकाकर्ताओं का कहना है कि निरसन अधिनियम, 1999 के लागू होने के बाद भी वे खाली जमीन पर कब्जा बनाए हुए हैं और राज्य का कब्जा केवल विधिवत है। रिट याचिकाओं में उठाए गए तर्कों से स्पष्ट होता है कि याचिकाकर्ताओं को खाली जमीन से बेदखल करने का प्रतिवादियों द्वारा कोई तत्काल खतरा नहीं था, क्योंकि अधिकांश रिट याचिकाएं 29.09.2015 के सरकारी आदेश का लाभ प्राप्त करने के लिए दायर की गई हैं। कुछ रिट याचिकाओं में यह आरोप लगाया गया है कि भूमि माफिया याचिकाकर्ताओं को उनकी भूमि से बेदखल करने का प्रयास कर रहे थे, लेकिन इस संबंध में दलीलें अस्पष्ट थीं क्योंकि न तो घटना की कोई तिथि या समय बताया गया था और न ही

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



कथित भूमि माफियाओं का नाम लिया गया था। अंत में, रिट याचिकाओं के लंबित रहने के दौरान भी याचिकाकर्ताओं द्वारा किसी तीसरे पक्ष द्वारा बेदखली के खतरे की आशंका जताते हुए कोई आवेदन दायर नहीं किया गया था। अतः, रिट याचिका में दी गई दलीलों से हम याचिकाकर्ताओं की बेदखली के खतरे का कोई निष्कर्ष नहीं निकाल सकते। हालांकि, यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता विवादित भूमि पर अपने कब्जे की रक्षा करने के हकदार होंगे, जब भी कार्रवाई का कारण उत्पन्न होता है, यदि याचिकाकर्ता निरसन अधिनियम, 1999 के लागू होने की तिथि, यानी 18.03.1999 (निर्दिष्ट तारीख) को खाली भूमि पर अपना कब्जा साबित करने में सक्षम होते हैं।

65. जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, खाली भूमि पर कब्जे से संबंधित विवाद काफी विवादास्पद है और इस पर निर्णय लेने के लिए अभिलेख पर मौजूद सामग्री अपर्याप्त/अस्पष्ट है। हम यह भी जानते हैं कि सामान्यतः अधिनियम, 1976 के अंतर्गत पारित आदेशों और परिणामी अधिसूचनाओं पर प्रश्न उठाने वाला मुकदमा वर्जित है, क्योंकि अधिनियम, 1976 एक स्व-निहित संहिता है। याचिकाकर्ताओं के स्वयं के कथनानुसार, वे रिक्त भूमि पर कब्जे में हैं और अधिनियम, 1976 के अंतर्गत कार्यवाही समाप्त हो चुकी है, इसलिए सक्षम न्यायालय मुकदमा स्वीकार कर सकता था और उचित राहत प्रदान कर सकता था, जब भी कार्रवाई का कारण उत्पन्न हुआ हो, यह इस बात पर निर्भर करता कि क्या अतिरिक्त रिक्त भूमि का वास्तविक कब्जा निर्दिष्ट तिथि से पहले लिया गया था या नहीं, और यह अधिनियम, 1976 के अंतर्गत आदेशों और अधिसूचनाओं की वैधता पर प्रश्न उठाए बिना किया जा सकता था। अतः, हमारा मत है कि याचिकाकर्ता विवादित भूमि में अपने किसी भी हित की रक्षा के लिए सक्षम न्यायालय में मुकदमा दायर कर सकते थे। **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम एहसान और अन्य (2024) 14 एससीसी 269** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून हमारे उपरोक्त दृष्टिकोण का समर्थन करता है, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित कहा है:

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



“30. निस्संदेह, राज्य और भूस्वामी के बीच रिट कार्यवाही में, न्यायालय अभिलेख में रखे गए साक्ष्यों के आधार पर यह निर्धारित कर सकता है कि कब्जा लिया गया है या नहीं, और ऐसा करते समय, यदि कब्जा लेने की वैधानिक प्रक्रिया का पालन नहीं किया गया है, तो वह राज्य के विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष निकाल सकता है [देखें उत्तर प्रदेश राज्य बनाम हरि राम]। हालांकि, जहां कब्जा बहुत पहले लिया गया माना जाता है और भूस्वामी द्वारा रिट न्यायालय में आने में अनुचित देरी हुई है, वहां कब्जा लेने की निर्धारित प्रक्रिया का उल्लंघन निर्णायक कारक नहीं होगा, क्योंकि यह माना जा सकता है कि जिस व्यक्ति के लाभ के लिए यह प्रक्रिया मौजूद थी, उसने इसके अंतर्गत अपने अधिकार का त्याग कर दिया था (देखें असम राज्य बनाम भास्कर ज्योति शर्मा)। ऐसी स्थिति में, वास्तविक कब्जे का निर्धारण अभिलेख में उपलब्ध सामग्री/सबूतों के आधार पर किया जाना चाहिए, न कि केवल भूस्वामी से कब्जा लेने की प्रक्रिया में त्रुटि ढूंढकर। और यदि रिट न्यायालय को ऐसे प्रश्न का निर्धारण करने में कठिनाई होती है, चाहे अभिलेख में अपर्याप्त/अस्पष्ट सामग्री/सबूतों के कारण हो या निश्चित राय बनाने के लिए मौखिक साक्ष्य की भी आवश्यकता हो, तो वह रिट याचिकाकर्ता को मुकदमे में भेज सकता है, यदि मुकदमा अन्यथा पोषणीय हो।

31. इस मामले में, मूल याचिकाकर्ता को यह जानकारी थी कि उसकी 5499.20 वर्ग मीटर भूमि को 26-11-1977 के आदेश द्वारा अधिशेष घोषित किया गया था। फिर भी, इस आदेश को रिट याचिका के माध्यम से 1986 से पहले चुनौती नहीं दी गई थी। इस बीच क्या हुआ, इसका खुलासा नहीं किया गया है। यदि हम यह मान भी लें कि तीसरी रिट याचिका एक अलग कारण पर आधारित थी, तब भी पहली रिट याचिका दायर करने में इतनी देरी का कारण स्पष्ट हो सकता था, विशेषकर तब जब मूल याचिकाकर्ता को राज्य के इस दावे की पूरी जानकारी थी कि निहित अधिसूचना के प्रकाशन के बाद वर्ष 1979 में कब्जा ले लिया गया था। इस देरी का एकमात्र स्पष्टीकरण, यदि कोई हो, तो रिट याचिका के परिच्छेद 4 में मिलता है, जहाँ यह कहा गया है कि दिनांक 26-11-1977 का आदेश एकतरफा था। यदि हम यह मान भी

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



लें कि दिनांक 26-11-1977 का आदेश एकतरफा था, तो भी रिट याचिका में इस बात का कोई खुलासा नहीं है कि मूल याचिकाकर्ता को इसकी जानकारी कब हुई।

33. जहाँ तक मूल याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत दस्तावेजी सामग्री का सवाल है, हम पाते हैं कि 1979 से 1987 तक की अवधि का कोई भी खतौनी या खसरा उद्धरण प्रस्तुत नहीं किया गया था। तीसरी रिट याचिका में 1405 से 1417 फसली की अवधि, यानी 1998 से 2010 तक की अवधि के खतौनी या खसरा के अंश संलग्न हैं। इन दस्तावेजों के अतिरिक्त, 1989 से शुरू होने वाली अवधि की कुछ राजस्व प्राप्तियां भी प्रस्तुत की गई हैं। राज्य के अनुसार, अतिरिक्त भूमि पर कब्जा वर्ष 1979 में लिया गया था। यदि ऐसा है, तो भले ही याचिकाकर्ता ने उसके बाद कभी भी कब्जा कर लिया हो, संभवतः 20-8-1987 के एकतरफा अंतरिम आदेश के आधार पर, यह राज्य के अधिकार को समाप्त नहीं करेगा, क्योंकि इस न्यायालय ने इंदौर विकास प्राधिकरण (लैप्स-5 जे.)¹⁰ के मामले में निर्णय दिया था, जहाँ निर्णय के परिच्छेद 258 में यह कहा गया था कि एक बार भूमि का स्वामित्व अधिग्रहण और कब्जा लेने के परिणामस्वरूप राज्य में निहित हो जाने के बाद, भले ही भूमिधारक ने कब्जा बरकरार रखा हो या राज्य द्वारा कब्जा लेने के बाद उस पर अतिक्रमण किया हो, वह केवल अतिक्रमणकारी है और उसका कब्जा, यदि कोई हो, तो मालिक यानी राज्य की ओर से होगा।

34. इस स्तर पर, हम प्रतिवादी की ओर से दिए गए एक अन्य तर्क को खारिज करने पर ध्यान दे सकते हैं, जो यह है कि उच्च न्यायालय ने 20-8-1987 को मूल याचिकाकर्ता के कब्जे की रक्षा करते हुए एक अंतरिम आदेश दिया था, इसलिए यह माना जाना चाहिए कि उस समय तक उससे कब्जा नहीं लिया गया था। इसमें कोई संदेह नहीं है कि मूल याचिकाकर्ता एकतरफा अंतरिम आदेश प्राप्त करने में सफल रहा, लेकिन अभिलेख में ऐसा कोई सबूत नहीं है जिससे यह पता चले कि राज्य की आपत्ति पर विचार करने के बाद इस अंतरिम आदेश की पुष्टि की गई थी। इसके अलावा, यदि अंतरिम आदेश दिए जाने से पहले कब्जा ले लिया गया था, जैसा कि अपीलकर्ताओं के मामले में है, और रिट याचिका का निपटारा करते समय कब्जे का प्रश्न खुला छोड़ दिया गया था, तो अंतरिम आदेश किसी भी तरह से कब्जे की निरंतरता को

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



साबित करने के लिए निर्णायक नहीं होगा। इन परिस्थितियों में, साथ ही चूंकि वर्ष 1979 और 1987 के बीच मूल याचिकाकर्ता के कब्जे के संबंध में कोई दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था, हमारी राय में, अंतरिम आदेश यह साबित करने के लिए बहुत अधिक साक्ष्य कीमत नहीं रखता है कि वर्ष 1987 से पहले कब्जा नहीं लिया गया था।

निष्कर्ष

(35) उपरोक्त चर्चा के मददेनजर और निम्नलिखित को ध्यान में रखते हुए:

(क) अधिशेष भूमि पर कब्जा लेने के संबंध में एक गंभीर विवाद था;

(ख) निहित अधिसूचना के प्रकाशन के बाद, राज्य द्वारा कथित रूप से कब्जा लेने की तारीख से पहली रिट याचिका दायर करने में लगभग सात साल की देरी हुई थी;

(ग) कि कथित कब्जे की तारीख और पहली रिट याचिका दाखिल करने की तारीख के बीच की अवधि का कोई दस्तावेजी साक्ष्य जैसे खसरा या खतौनी मूल याचिकाकर्ता द्वारा दाखिल नहीं किया गया था;

(घ) कि मुकदमेबाजी के पिछले दो दौरों में, उच्च न्यायालय ने अधिशेष भूमि पर कब्जे के मुद्दे पर निर्णय लेने से परहेज किया, भले ही यह मुद्दा पक्षों के बीच सीधे तौर पर उठा था; और

(ङ) कि कब्जे के लिए निर्धारित वैधानिक प्रक्रिया का उल्लंघन राज्य के कब्जे के दावे को खारिज करने का एकमात्र आधार नहीं हो सकता, जब यह कहा गया हो कि कब्जा उस तारीख से बहुत पहले लिया गया था जिस तारीख को मुद्दा उठाया गया था, हमारा यह सुविचारित मत है कि उच्च न्यायालय को निरसन अधिनियम, 1999 में निर्दिष्ट निर्दिष्ट तिथि से पहले अधिशेष भूमि के वास्तविक कब्जे के संबंध में मुद्दे पर निर्णय लेने से बचना चाहिए था। इसके बजाय, रिट याचिकाकर्ता को एक मुकदमे में भेजा जाना चाहिए था।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



66. ऊपर विचार किए गए कानून के मददेनजर, हम याचिकाकर्ता के अधिकार क्षेत्र, कब्जे और इस न्यायालय में आने में देरी के संदर्भ में इस समूह की प्रत्येक रिट याचिका के संबंध में तथ्यात्मक स्थिति पर संक्षेप में विचार करते हैं। रिट याचिकाओं को दाखिल करने के कारण पर उपरोक्त परिच्छेद में पहले ही चर्चा की जा चुकी है, इसलिए इसे दोहराना व्यर्थ होगा;

(66.1) रिट -सी संख्या 19612 वर्ष 2018 (कम्भा करण बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और

अन्य)

(क) कम्भा करण के पिता रिखी राम प्रश्नगत भूमि के मूल भूस्वामी थे। यह स्वीकार किया जाता है कि रिखी राम के बाद उनके चार पुत्र, कम्भा करण (याचिकाकर्ता), जिया लाल, कन्हैया लाल और धर्मराज, भूमि के उत्तराधिकारी थे, लेकिन केवल कम्भा करण (याचिकाकर्ता) ने ही इस न्यायालय से संपर्क किया है। रिखी राम को 14.12.1986 को धारा 8(3) के तहत नोटिस भेजा गया था, लेकिन इसके जवाब में कोई आपति दर्ज नहीं की गई। रिखी राम का देहांत 22.03.2006 को हुआ। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि अधिनियम, 1976 के अंतर्गत कार्यवाही रिखी राम के जीवनकाल में ही समाप्त हो गई थी और उन्होंने इस पर कभी आपति नहीं जताई। रिखी राम के देहांत के बाद भी, अधिनियम, 1976 की धारा 11(8) के अंतर्गत नोटिस जारी किए गए और रिखी राम के पुत्र श्री जिया लाल को 18.01.2008 को तामील कराए गए, फिर भी याचिकाकर्ता ने अगले दस वर्षों तक इस मामले पर निष्क्रियता बरती। याचिकाकर्ता ने यह भी खुलासा नहीं किया है कि उसे अधिनियम, 1976 के अंतर्गत कार्यवाही या राजस्व प्रविष्टियों के राज्य के नाम पर परिवर्तन के बारे में कब पता चला।

(ख) अतः, याचिकाकर्ता ने धारा 8(4) के तहत दिनांक 25.02.1986 के आदेश द्वारा भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने के लगभग 32 वर्ष बाद और धारा 10(5) के तहत दिनांक 02.08.1996 को स्वैच्छिक कब्जा ग्रहण करने के लगभग 22 वर्ष बाद मई 2018 में इस न्यायालय में याचिका दायर की है।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(ग) वर्तमान रिट याचिका दिनांक 04.07.2013 को रिट-सी संख्या 30361/2010 में दिए गए निर्णय के लगभग पांच वर्ष बाद दायर की गई है। दोनों रिट याचिकाओं में तय किए जाने वाले प्रश्न भी भिन्न हैं। इसके अलावा, रिट-सी संख्या 30361/2010 में याचिकाकर्ता द्वारा खाली भूमि पर कब्जे को लेकर कोई गंभीर विवाद नहीं था। दूसरी रिट याचिका में याचिकाकर्ता, बाबे लाल, वर्तमान रिट याचिका में याचिकाकर्ता का सह-भूमिधारक नहीं है।

(घ) याचिकाकर्ता द्वारा प्रश्नगत भूमि पर कब्जे के आरोप के समर्थन में, याचिकाकर्ता ने कुछ राजस्व अभिलेखों और तस्वीरों का सहारा लिया है। जहाँ तक राजस्व अभिलेखों का प्रश्न है, याचिकाकर्ता स्वयं स्वीकार करता है कि प्रश्नगत भूमि अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही के अनुसरण में राज्य के नाम पर दर्ज की गई है। इसके अलावा, याचिकाकर्ता के इस दावे को साबित करने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि तस्वीरें विवादित भूमि से संबंधित हैं और इसलिए उपरोक्त विस्तृत कारणों से तस्वीरों को कब्जे का प्रमाण नहीं माना जा सकता है।

(66.2) रिट-सी संख्या 8237 वर्ष 2017 (स्वर्गीय राजेंद्र प्रसाद, कानूनी वारिसों के माध्यम से बनाम राज्य और अन्य)

(क) उक्त मामले में, हदबंदी विवरणी श्री राजजन उर्फ राजभवन द्वारा दाखिल किया गया था, न कि याचिकाकर्ता द्वारा। याचिकाकर्ता यह भी साबित करने में विफल रहा है कि वह राजजन उर्फ राजभवन से किस प्रकार संबंधित है। श्री महादेव के पुत्र स्वर्गीय राजजन उर्फ राजभवन के उत्तराधिकारी उनकी पत्नी निर्मला देवी और चार पुत्र कोनार्क, चाणक्य, कनिष्क और अमित थे। अतः, वर्तमान रिट याचिका को बनाए रखने के लिए याचिकाकर्ता का अधिकार ही संदिग्ध है। याचिकाकर्ता यह खुलासा नहीं करता है कि उसे अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही और राज्य के नाम पर राजस्व प्रविष्टियों के उत्परिवर्तन की जानकारी कब हुई।

(ख) यह रिट याचिका फरवरी, 2017 में उस तारीख से लगभग 31 वर्ष बाद दायर की गई है जब प्रश्नगत भूमि को दिनांक 04.11.1985 के आदेश द्वारा धारा 8(4) के तहत

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



अधिशेष घोषित किया गया था और 29.09.1993 को धारा 10(5) के तहत स्वैच्छिक कब्जा लेने के लगभग 23 वर्ष बाद दायर की गई है।

(ग) याचिकाकर्ता, प्रश्नगत भूमि पर अपने कब्जे के आरोप के समर्थन में याचिकाकर्ता ने कुछ तस्वीरें प्रस्तुत की हैं; हालांकि, याचिकाकर्ता के इस दावे का समर्थन करने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि उक्त तस्वीरें विवादित भूमि से संबंधित हैं और इसलिए उपरोक्त विस्तृत कारणों से इन तस्वीरों को कब्जे का प्रमाण नहीं माना जा सकता है।

(66.3) रिट-सी संख्या 8238 वर्ष 2017 (जमुना प्रसाद और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य)

(क) याचिकाकर्ता मूल भूमिधारक राम जतन के वंशज हैं। धारा 8(3) के तहत नोटिस राम जतन को 23.12.1985 को दिया गया था। इसके बाद धारा 11(8) के तहत नोटिस राम जतन की पुत्री श्रीमती निर्मला को 14.02.1998 को दिया गया था। इसके अलावा, राम जतन ने धारा 11(8) के तहत नोटिस के जवाब में आपत्तियां भी दर्ज की थीं, जिन्हें 17.08.1998 को खारिज कर दिया गया था। अतः इसमें कोई संदेह नहीं है कि मूल भूमिधारक श्री राम जतन अधिनियम, 1976 के तहत शुरू की गई कार्यवाही से भली-भांति परिचित थे, लेकिन उन्होंने इस पर कोई आपत्ति नहीं जताई। आपत्तियां केवल धारा 11(8) के तहत कार्यवाही में संदेय धनराशि/मुआवजे के संबंध में दर्ज की गई थीं।

(ख) यह रिट याचिका फरवरी 2017 में, धारा 8(4) के तहत 3 दिसंबर 1985 को भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने के लगभग 31 वर्ष बाद और 26 दिसंबर 1997 को भूमि पर स्वैच्छिक कब्जा लेने के 19 वर्ष बाद दायर की गई है। याचिकाकर्ता यह बताने में विफल रहे हैं कि उन्हें अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही और राज्य के नाम पर राजस्व प्रविष्टियों के उत्परिवर्तन के बारे में कब पता चला।

(ग) याचिकाकर्ताओं ने विवादित भूमि पर अपने कब्जे के आरोप के समर्थन में राजस्व अभिलेखों, बिजली बिलों और तस्वीरों पर भरोसा किया है। राजस्व अभिलेखों के संबंध में,

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



याचिकाकर्ता इस तथ्य से इनकार नहीं करते कि विवादित भूमि फसली वर्ष 1402-1407 में राज्य के नाम पर दर्ज थी। बिजली बिलों से भी यह संकेत नहीं मिलता कि वे विवादित भूमि से संबंधित हैं और न ही उनमें कोई भूखंड संख्या बताई गई है। इसके अलावा, याचिकाकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत तस्वीरें भी सहायक नहीं हैं क्योंकि यह साबित करने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि उक्त तस्वीरें विवादित भूमि से संबंधित हैं और उपरोक्त विस्तृत कारणों के मददेनजर।

(66.4) रिट-सी संख्या 8242 वर्ष 2017 (राम देव और अन्य बनाम राज्य)

(क) यह रिट याचिका तीन हदबंदी मामलों से संबंधित है। याचिकाकर्ता संख्या 1-राम देव, दीना नाथ के पुत्र का दावा है कि दीना नाथ ने हदबंदी विवरणी दाखिल की थी। धारा 8(3) के तहत नोटिस 20.10.1984 को दीना नाथ को तामील कराया गया था, हालांकि, कोई आपत्ति दर्ज नहीं की गई। धारा 10 (5) के तहत नोटिस 23.8.1996 को दीना नाथ के पुत्र बलदेव को तामील कराया गया था। इस प्रकार, दीना नाथ, अधिनियम, 1976 के तहत की गई कार्यवाही से अवगत होने के बावजूद, इस पर कभी आपत्ति नहीं जताई। याचिकाकर्ता संख्या 1 यह भी बताने में विफल रहा है कि उसे अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही और राज्य के नाम पर राजस्व प्रविष्टियों के उत्परिवर्तन के बारे में कब पता चला।

(ख) यह याचिका फरवरी 2017 में दायर की गई है, जबकि धारा 8(4) के तहत 14.11.1984 को भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने के 32 वर्ष बाद और धारा 10(5) के तहत 22.4.1996 को स्वैच्छिक कब्जा लेने के 20 वर्ष बाद यह याचिका दायर की गई है।

(ग) याचिकाकर्ता संख्या 2 का दावा है कि उनके पिता, गंभीर के पुत्र माइकू लाल ने हदबंदी निर्धारण विवरणी दाखिल की थी। धारा 8(3) के तहत नोटिस माइकू लाल को 01.4.1981 को तामील कराया गया था, लेकिन कोई आपत्ति दर्ज नहीं कराई गई। धारा 9 के तहत अंतिम बयान माइकू लाल के पुत्र मेवा लाल को तामील कराया गया था। इस प्रकार, माइकू लाल अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही से अवगत होने के बावजूद, कभी भी इस पर आपत्ति नहीं जताई।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(घ) यह याचिका फरवरी 2017 में दायर की गई है, जबकि धारा 8(4) के तहत 23.9.1982 को भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने के 34 वर्ष बाद और धारा 10(5) के तहत 27.4.1996 को स्वैच्छिक कब्जा लेने के 20 वर्ष बाद यह याचिका दायर की गई है। याचिकाकर्ता संख्या 2 ने यह भी स्पष्ट नहीं किया है कि उसे अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही और राज्य के नाम पर राजस्व प्रविष्टियों के उत्परिवर्तन के बारे में कब पता चला।

(ङ) याचिकाकर्ता संख्या 3 - शिव बरन, गंभीर के पुत्र ने हदबंदी विवरणी दाखिल करने का दावा किया है। हालांकि, याचिकाकर्ता संख्या 3 द्वारा जिस हदबंदी मामले का हवाला दिया गया है, वह हदबंदी मामला संख्या पी-1460/1976 है और उक्त मामले में हदबंदी विवरणी अंगानु के पुत्रों नानकु, हीरा और पचई द्वारा दाखिल किया गया है। याचिकाकर्ता संख्या 3 ने रिट याचिका में इस तथ्य को स्वीकार भी किया है। हालांकि, याचिकाकर्ता संख्या 3 यह साबित करने में पूरी तरह विफल रहा है कि उसका नांकू, हीरा और पचई से क्या संबंध है और उसने तीनों भूस्वामियों की भूमि पर अपना दावा कैसे स्थापित किया है। इस प्रकार, याचिकाकर्ता संख्या 3 रिट याचिका दायर करने का अपना अधिकार साबित करने में पूरी तरह विफल रहा है।

(च) फिर भी, यह रिट याचिका फरवरी 2017 में दायर की गई है, जबकि संबंधित भूमि को धारा 8(4) के तहत अधिशेष घोषित किए जाने के 35 वर्ष बाद और 2.8.1996 को धारा 10(5) के तहत स्वैच्छिक कब्जा लेने के 20 वर्ष बाद यह याचिका दायर की गई है। इसके अलावा, अभिलेखों से पता चलता है कि उक्त हदबंदी निर्धारण मामले में भूस्वामियों को धारा 8(3) के तहत नोटिस तामील किया गया था। याचिकाकर्ता संख्या 3 ने यह भी खुलासा नहीं किया है कि उसे अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही और राज्य के नाम पर राजस्व प्रविष्टियों के उत्परिवर्तन के बारे में कब पता चला।

(छ) याचिकाकर्ताओं ने विवादित भूमि पर अपना कब्जा साबित करने के लिए समेकन अधिनियम, 1953 के तहत सीएच-प्रपत्र संख्या 23, बिजली बिल और तस्वीरों का हवाला दिया है। सीएच प्रपत्र संख्या 23 के अवलोकन से पता चलता है कि भूमि राज्य-सक्षम प्राधिकारी,

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



शहरी सीमा के नाम पर दर्ज है। बिजली बिलों में कोई भूखंड संख्या उल्लिखित नहीं है और इसलिए यह नहीं माना जा सकता कि वे विवादित भूमि से संबंधित हैं। इसके अलावा, अभिलेख में ऐसा कोई प्रमाण नहीं है जिससे यह साबित हो सके कि तस्वीरें प्रश्नगत भूमि की हैं और उपरोक्त परिच्छेद में दिए गए विस्तृत कारणों से याचिकाकर्ताओं के लिए ये तस्वीरें किसी काम की नहीं हैं। इसके अलावा, तीन अलग-अलग भूमि सीमा मामलों से उत्पन्न होने के कारण रिट याचिका स्वयं पोषणीय नहीं है।

(66.5) रिट-सी संख्या 26381 वर्ष 2017 (बृजलाल बनाम राज्य और अन्य)

(क) उक्त रिट याचिका दो भूमि सीमा मामलों में शामिल भूमि के संबंध में दायर की गई है। पहले भूमि सीमा मामले के संबंध में, यह आरोप लगाया गया है कि याचिकाकर्ता के दादा महादेव मूल भूमिधारक थे। महादेव का देहांत हो गया और वे अपने पीछे पुत्र शारदा प्रसाद को छोड़ गए, जिनके दो पुत्र इंद्रराज और बृजलाल (याचिकाकर्ता) उत्तराधिकारी बने। हालांकि, इंद्रराज ने वर्तमान रिट याचिका में भाग नहीं लिया है।

(ख) जहां तक दूसरे भूमि सीमा मामले का संबंध है, यह आरोप लगाया गया है कि महादेव के भाई सहदेव मूल भूमिधारक थे। सहदेव अविवाहित थे और उनके देहांत के बाद प्रश्नगत भूमि याचिकाकर्ता के पिता शारदा प्रसाद को प्राप्त हुई। हालांकि, अभिलेख में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह साबित हो सके कि सहदेव, महादेव का भाई था और सहदेव की मृत्यु के बाद भूमि शारदा प्रसाद को मिली थी। इसलिए, दूसरे सीमा शुल्क मामले में याचिकाकर्ता की याचिका दायर करने की योग्यता ही संदिग्ध है।

(ग) इसके अलावा, याचिकाकर्ता का यह आरोप कि उसके दादा महादेव ने सीमा शुल्क विवरणी दाखिल की थी, गलत है, क्योंकि सीमा शुल्क विवरणी याचिकाकर्ता के पिता शारदा प्रसाद ने दाखिल किया था। यह याचिका मई 2017 में, धारा 8(4) के तहत 01.10.1984 को भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने की तारीख से लगभग 31 वर्ष और धारा 10(5) के तहत भूमि पर स्वैच्छिक कब्जा लेने की तारीख से लगभग 20 वर्ष बाद दायर की गई है। याचिकाकर्ता

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



यह भी नहीं बताता है कि उसे अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही और राज्य के नाम पर राजस्व प्रविष्टियों के उत्परिवर्तन के बारे में कब पता चला।

(घ) याचिकाकर्ता इस तथ्य से भी इनकार नहीं करता कि इन्हीं दो हदबंदी मामलों के संबंध में इस न्यायालय के समक्ष दो अन्य रिट याचिकाएँ दायर की गई थीं। अतः, यह समझना कठिन है कि एक ही विषय से संबंधित तीन रिट याचिकाएँ कैसे स्वीकार्य थीं। इन रिट याचिकाओं के समूह में, जिनमें वर्तमान याचिका भी शामिल है, दो याचिकाओं का निर्णय हो चुका है।

(ङ) विवादित भूमि पर अपना कब्ज़ा साबित करने के लिए याचिकाकर्ता ने बिजली के बिल और तस्वीरें प्रस्तुत की हैं। बिजली के बिलों की जाँच से पता चलता है कि अभिलेख में ऐसा कोई प्रमाण नहीं है जिससे यह सिद्ध हो कि उक्त बिल विवादित भूमि से संबंधित हैं, क्योंकि उन पर कोई भूखंड संख्या अंकित नहीं है। इसके अलावा, अभिलेख में ऐसा कोई प्रमाण नहीं है जिससे यह सिद्ध हो कि तस्वीरें विवादित भूमि से संबंधित हैं और अतः उपरोक्त विस्तृत कारणों से तस्वीरों को कब्ज़े का प्रमाण नहीं माना जा सकता।

(66.6) रिट सी संख्या 6765 वर्ष 2018 (मेवा लाल यादव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य)

(क) याचिकाकर्ता ने स्वीकार किया है कि उसने 24.07.2004 को शिव भान यादव से प्रश्नगत भूमि खरीदी थी। इस प्रकार, याचिकाकर्ता को अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही की कोई जानकारी नहीं है। याचिकाकर्ता यह भी स्वीकार करता है कि राजस्व अभिलेखों में भूमि राज्य के नाम पर दर्ज है। याचिकाकर्ता द्वारा उल्लिखित खतौनी गटा संख्या 120 एम से संबंधित है, जबकि याचिकाकर्ता ने गटा संख्या 120 खरीदी है। याचिकाकर्ता ने यह रिट याचिका फरवरी 2018 में दायर की है, जबकि 22.02.1985 को धारा 8(4) के तहत भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने के लगभग 33 वर्ष बाद और धारा 10(5) के तहत भूमि का स्वैच्छिक कब्ज़ा लेने के लगभग 20 वर्ष बाद यह याचिका दायर की गई है। याचिकाकर्ता के पक्ष में भूमि की

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



बिक्री के 13 वर्ष से अधिक समय बाद यह रिट याचिका दायर की गई है। याचिकाकर्ता ने भूमि के स्वामी होने का प्रमाण दिखाने के लिए स्वामित्व विलेख भी प्रस्तुत नहीं किया है।

(ख) इसके अलावा, यह दर्शाने के लिए कोई दस्तावेज/सबूत प्रस्तुत नहीं किया गया है कि याचिकाकर्ता विवादित भूमि पर कब्जे में है। याचिकाकर्ता को अन्य याचिकाकर्ताओं के बराबर होने का दावा करने से पहले अपना पक्ष साबित करना होगा, जिसमें वह विफल रहा है। इसके अलावा, याचिकाकर्ता द्वारा उद्धृत न्यायालय का निर्णय वर्तमान रिट याचिका दायर करने से तीन-चार वर्ष पहले पारित किया गया था। याचिकाकर्ता द्वारा उद्धृत दोनों मामलों का निर्णय इस आधार पर किया गया था कि राज्य ने भूमि पर कब्जा नहीं लिया था, जबकि वर्तमान मामले में राज्य का दावा है कि उसने स्वेच्छा से भूमि पर कब्जा लिया है और राजस्व अभिलेखों में राज्य का नाम भी दर्ज है। इसके अलावा, अभिलेखों में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह सिद्ध हो कि विवादित भूमि का कब्जा याचिकाकर्ता के पास है, यहां तक कि स्वामित्व विलेख भी प्रस्तुत नहीं किया गया है।

(ग) रोचक बात यह है कि रिट याचिका संख्या 26381/2017 (बृज लाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य), जो इन रिट याचिकाओं के समूह के साथ ही तय की जा रही है और जो हदबंदी निर्धारण मामले संख्या पी-531/1976 (राज्य बनाम महादेव) और हदबंदी निर्धारण मामले संख्या पी-542/1976 (राज्य बनाम सहदेव) से संबंधित है, जिसे महादेव और सहदेव के वंशजों ने दायर किया था, में यह आरोप लगाया गया है कि सहदेव और महादेव सगे भाई थे। सहदेव अविवाहित थे और महादेव का एक पुत्र शारदा प्रसाद था। अतः, सहदेव और महादेव के निधन के बाद उनकी भूमि शारदा प्रसाद को मिली, जिसके बाद उनके दो पुत्र बृज लाल (रिट याचिका संख्या 26381/2017 में याचिकाकर्ता) और इंद्रराज उत्तराधिकारी बने, जबकि याचिकाकर्ता ने यह भूमि शिव भान यादव से खरीदी है। इस प्रकार, विवादित भूमि पर याचिकाकर्ता का स्वामित्व भी संदेह के घेरे में है।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(66.7) रिट याचिका संख्या 6926 वर्ष 2016 (स्वर्गीय मोहिब उल्लाह, उनके कानूनी वारिसों के माध्यम से बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य)

(क) यह स्वीकार किया जाता है कि मूल भूमिधारी मोहिब उल्लाह ने हदबंदी निर्धारण विवरणी दाखिल की थी। यह भी स्वीकार किया जाता है कि धारा 10(5) के तहत नोटिस 28.3.1979 को जारी किया गया था, लेकिन याचिकाकर्ता को तामील नहीं कराया गया था। यह भी स्वीकार किया जाता है कि राजस्व अभिलेखों में राज्य का नाम दर्ज है। यद्यपि उक्त मामले के अभिलेख प्रतिवादियों के पास उपलब्ध नहीं हैं, इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि वर्तमान रिट याचिका धारा 10(5) के तहत भूमि का स्वैच्छिक कब्जा लेने के लिए नोटिस जारी किए जाने की तिथि से लगभग 37 वर्ष बाद दायर की गई है। वर्तमान में विचाराधीन रिट याचिकाओं में से कुछ मामलों में विवादित भूमि याचिकाकर्ता की भूमि के निकट स्थित है और यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वर्तमान मामले में भी इसी प्रकार की प्रक्रिया का पालन किया गया है।

(ख) याचिकाकर्ता ने विवादित भूमि पर अपने कब्जे के दावे के समर्थन में गटा संख्या 14-एम के खसरा और निर्देशांक दर्शाने वाली तस्वीरों का हवाला दिया है। जहां तक भूखंड संख्या 14-एम के खसरा का संबंध है, धारा 10(5) के तहत जारी नोटिस से यह स्पष्ट है कि खसरा संख्या 14 का केवल एक भाग अधिनियम, 1976 के तहत रिक्त घोषित किया गया था और इस प्रकार उक्त भूखंड के शेष भाग को खसरा संख्या 14-एम के रूप में क्रमांकित किया गया है और यह याचिकाकर्ता के नाम पर दर्ज है। जहां तक तस्वीरों का सवाल है, इस बात को साबित करने के लिए कोई सबूत नहीं है कि तस्वीरें विवादित भूमि से संबंधित हैं और इसलिए उपरोक्त कारणों से याचिकाकर्ता के विवादित भूमि पर कब्जे के संबंध में उन पर भरोसा नहीं किया जा सकता है।

(66.8) रिट-सी संख्या 6679 वर्ष 2018 (राम सुमेर बनाम राज्य और अन्य)

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(क) याचिकाकर्ता स्वयं को मूल भूमिधारक महादेव का पोता बताता है। यह स्वीकार किया जाता है कि महादेव के तीन पुत्र थे, अर्थात् हीरा लाल, मोहन लाल और बच्चा लाल। याचिकाकर्ता हीरा लाल का पुत्र है। इस प्रकार, महादेव के सभी वंशज वर्तमान रिट याचिका में शामिल नहीं हुए हैं।

(ख) धारा 8(3) के तहत नोटिस 22.04.1981 को महादेव को तामील कराया गया था। इसके बाद, धारा 9 के तहत अंतिम बयान भी महादेव को तामील कराया गया। इसके बाद, धारा 10(5) के तहत 15.02.1990 को एक नोटिस जारी किया गया और 16.02.1990 को महादेव को तामील कराया गया। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि महादेव को अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही की पूरी जानकारी थी, लेकिन उन्होंने कभी इस पर आपत्ति नहीं जताई। याचिकाकर्ता यह भी खुलासा नहीं करता है कि उसे अधिनियम, 1996 के तहत कार्यवाही और राज्य के नाम पर राजस्व प्रविष्टियों के उत्परिवर्तन के बारे में कब पता चला।

(ग) धारा 8(4) के तहत 03.11.1982 को भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने की तिथि से लगभग 33 वर्ष और धारा 10(5) के तहत 15.02.1990 को स्वैच्छिक कब्जा ग्रहण करने की तिथि से 28 वर्ष बाद याचिकाकर्ता ने मार्च 2018 में यह रिट याचिका दायर की है।

(घ) याचिकाकर्ता ने विवादित भूमि पर अपने कब्जे के आरोप के समर्थन में तस्वीरें और खतौनी प्रस्तुत की हैं। हालांकि, इस बात को साबित करने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि तस्वीरें विवादित भूमि से संबंधित हैं और इसलिए ऊपर बताए गए विस्तृत कारणों से तस्वीरों को कब्जे के प्रमाण के रूप में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है। याचिकाकर्ता स्वयं इस तथ्य से इनकार नहीं करता है कि अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही के अनुसरण में राजस्व अभिलेखों में भूमि राज्य के नाम पर दर्ज की गई थी। इसलिए, याचिकाकर्ता द्वारा भरोसा किए गए राजस्व अभिलेख भी कब्जे के संबंध में सहायक नहीं होंगे।

(66.9) रिट-सी संख्या 6701 वर्ष 2018 (राम अवध बनाम राज्य और अन्य)

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(क) याचिकाकर्ता मूल भूमिधारक बच्चा लाल का पुत्र है। धारा 8(3) के तहत नोटिस मूल भूमिधारक के भतीजे रामफल को 2.12.1981 को तामील कराया गया था। वर्तमान रिट याचिका मई 2018 में दायर की गई है, जो धारा 8(4) के तहत 5.10.1982 को भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने के लगभग 33 वर्ष बाद और धारा 10(5) के तहत 23.05.1996 को स्वैच्छिक कब्जा लेने के 22 वर्ष बाद है। याचिकाकर्ता यह भी बताने में विफल रहा है कि उसे अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही और राज्य के नाम पर राजस्व प्रविष्टियों के उत्परिवर्तन के बारे में कब पता चला।

(ख) याचिकाकर्ता ने विवादित भूमि पर अपने कब्जे के आरोप के समर्थन में तस्वीरें और राजस्व अभिलेख प्रस्तुत किए हैं। हालाँकि, इस तथ्य को प्रमाणित करने के लिए अभिलेख में कोई ठोस सामग्री नहीं है कि तस्वीरें विचाराधीन भूमि से संबंधित हैं और इसलिए उपरोक्त विस्तृत कारणों से तस्वीरों को कब्जे का प्रमाण नहीं माना जा सकता है। इसके अलावा, याचिकाकर्ता स्वयं स्वीकार करता है कि अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही के अनुसरण में भूमि राज्य सरकार के नाम पर दर्ज की गई थी।

(66.10) रिट-सी संख्या 1125 वर्ष 2018 (राघवेंद्र कुमार और अन्य बनाम राज्य और अन्य)

(क) याचिकाकर्ता मूल भूस्वामी महादेव के पुत्र (मुनीम-याचिकाकर्ता संख्या 3) और पोते (राघवेंद्र कुमार-याचिकाकर्ता संख्या 1 और अजीत कुमार, याचिकाकर्ता संख्या 2) हैं। धारा 8(3) के तहत नोटिस महादेव की पत्नी श्रीमती नानकी को तामील कराया गया था। धारा 9 के तहत अंतिम बयान महादेव के पुत्र भगवत प्रसाद को 12.10.1984 को तामील कराया गया था। इसके अलावा, धारा 10(5) के तहत नोटिस महादेव के पुत्र मुनीम और वर्तमान रिट याचिका में याचिकाकर्ता संख्या 3 को भी तामील कराया गया था।

(ख) इस प्रकार, मूल भूस्वामी और उनके पुत्र, याचिकाकर्ता संख्या 3 और याचिकाकर्ता संख्या 1 और 2 के पिता भगवत प्रसाद, अधिनियम 1976 के तहत कार्यवाही से भलीभांति

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



परिचित थे, लेकिन इस पर कभी आपत्ति नहीं जताई गई। वर्तमान रिट याचिका मई 2018 में दायर की गई है, जबकि संबंधित भूमि को धारा 8(4) के तहत 23.08.1982 को अधिशेष घोषित किए जाने के लगभग 35 वर्ष बाद और धारा 10(5) के तहत 17.12.1986 को स्वैच्छिक कब्जा लेने के 31 वर्ष बाद यह याचिका दायर की गई है।

(ग) याचिकाकर्ताओं ने संबंधित भूमि पर कब्जे के अपने आरोप के समर्थन में कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है।

(66.11) रिट-सी संख्या 11226 वर्ष 2018 (श्रीमती पुष्पा देवी और अन्य बनाम राज्य और अन्य)

(क) याचिकाकर्ताओं के पिता, संकथा प्रसाद मूल भूमिधारक थे। संकथा प्रसाद ने अधिनियम, 1976 की धारा 33 के तहत अपील दायर की थी, जिसे 27.9.2008 को खारिज कर दिया गया था। इस प्रकार, मूल भूमिधारक कार्यवाही से भली-भांति परिचित थे। अधिनियम, 1976 के तहत याचिका दायर की गई थी और उसे चुनौती भी दी गई थी, लेकिन सफलता नहीं मिली। इसलिए, अपील खारिज होने के दस साल बाद दायर की गई यह रिट याचिका स्वयं ही पोषणीय नहीं होगी।

(ख) इसके अलावा, यह रिट याचिका मई, 2018 में दायर की गई है, जबकि धारा 8(4) के तहत भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने की तिथि से 37 वर्ष और धारा 10(5) के तहत 01.01.1996 को भूमि पर स्वैच्छिक कब्जा लेने की तिथि से 22 वर्ष बाद यह दायर की गई है। इसके अलावा, याचिकाकर्ताओं ने प्रश्नगत भूमि पर अपने कब्जे को दर्शाने के लिए कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है। यह स्वीकार किया जाता है कि प्रश्नगत भूमि राजस्व अभिलेखों में राज्य के नाम पर दर्ज है।

(66.12) रिट-सी संख्या 19678 वर्ष 2018 (बुद्धन प्रसाद बनाम राज्य)

(क) मूल भूमिधारक महादेव के पुत्र जोखु, मोती और हीरा तथा जवाहर के पुत्र दुखरन थे, जिन्होंने अलग-अलग हदबंदी निर्धारण विवरणी दाखिल किए थे। दुखरन की पत्नी को धारा

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



8(3) के तहत नोटिस तामील किया गया था। मूल भूमिधारकों को धारा 10(5) के तहत अलग-अलग नोटिस जारी किए गए और तामील किए गए। इस प्रकार, मूल भूमिधारकों ने अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही पर कभी आपत्ति नहीं जताई थी और उन्हें इसकी जानकारी थी।

(ख) याचिकाकर्ता सह-भूमिधारकों में से एक, जोखू का पुत्र है। अतः, यह समझना कठिन है कि याचिकाकर्ता द्वारा सभी मूल भूमिधारकों की ओर से दायर रिट याचिका कैसे पोषणीय हो सकती है।

(ग) इसके अलावा, अभिलेखों में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह सिद्ध हो कि जवाहर का पुत्र दुखरन, याचिकाकर्ता के दादा महादेव का पोता है।

(घ) याचिकाकर्ता को दुखरन द्वारा दायर रिट-सी संख्या 68563/2012 में दिनांक 15.5.2014 को पारित निर्णय और आदेश के समतुल्य नहीं माना जा सकता, क्योंकि वर्तमान याचिका उसके चार वर्ष बाद दायर की गई है। इसके अलावा, विवादित प्रश्न और याचिकाकर्ता के कब्जे का प्रश्न उक्त याचिकाओं में गंभीर विवाद का विषय नहीं था, जबकि वर्तमान मामले में ऐसा नहीं है।

(ङ) वर्तमान रिट याचिका मई, 2018 में धारा 8(4) के तहत भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने की तिथि से 35 वर्ष से अधिक और धारा 10(5) के तहत भूमि का स्वैच्छिक कब्जा लेने की तिथि से 25 वर्ष से अधिक समय बाद दायर की गई है। याचिकाकर्ता ने यह खुलासा नहीं किया है कि उसे अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही और राज्य के नाम पर राजस्व प्रविष्टियों के उत्परिवर्तन के बारे में कब पता चला।

(च) याचिकाकर्ता ने विवादित भूमि पर अपना कब्जा दिखाने के लिए बिजली के बिल और तस्वीरें प्रस्तुत की हैं। बिजली के बिलों में कोई भूखंड संख्या नहीं दर्शाया गया है और इसलिए इन्हें विवादित भूमि से संबंधित नहीं कहा जा सकता है। इसके अलावा, तस्वीरें भी याचिकाकर्ता के लिए सहायक नहीं होंगी, क्योंकि यह प्रदर्शित करने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि वे विवादित भूमि से संबंधित हैं और उपरोक्त परिच्छेद में विस्तृत कारणों से भी।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(66.13) रिट-सी संख्या 19694 वर्ष 2018 (देवेंद्र कुमार जायसवाल बनाम राज्य और

अन्य)

(क) याचिकाकर्ता के पिता शंभू नाथ विवादित भूमि के मूल भूस्वामी थे। शंभू नाथ का निधन 04.01.2006 को हो गया। इसके अतिरिक्त, शंभू नाथ ने 4.3.1983 को जारी धारा 9 के तहत अंतिम निर्णय पर 21.3.1983 को आपत्तियां भी दर्ज की थीं और इन आपत्तियों को 29.4.1985 को खारिज कर दिया गया था। इस प्रकार, मूल भूमिधारक, अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही से भलीभांति परिचित था। इसके अलावा, याचिकाकर्ता यह भी बताने में विफल रहा है कि उसे अधिनियम, 1976 के तहत भूमि हदबंदी निर्धारण कार्यवाही और राज्य के नाम पर राजस्व प्रविष्टियों के उत्परिवर्तन के बारे में कब और कैसे पता चला।

(ख) इसके अतिरिक्त, वर्तमान रिट याचिका मई, 2018 में धारा 8(4) के तहत भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने की तिथि से 37 वर्ष और धारा 10(5) के तहत 21.8.1990 को भूमि का स्वैच्छिक कब्जा लेने की तिथि से लगभग 28 वर्ष बाद दायर की गई है।

(ग) याचिकाकर्ता ने विवादित भूमि पर अपना कब्जा दिखाने के लिए बिजली बिल, मीटर सील करने का प्रमाण पत्र और तस्वीरों का हवाला दिया है। बिजली बिल और मीटर वाचन प्रमाण पत्र में कोई भूखंड संख्या अंकित नहीं है और इसलिए इन्हें विवादित भूमि से संबंधित नहीं कहा जा सकता है। तस्वीरें भी याचिकाकर्ता के लिए सहायक नहीं होंगी क्योंकि यह प्रदर्शित करने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि वे विवादित भूमि से संबंधित हैं और उपरोक्त परिच्छेद में विस्तृत कारणों से भी।

(66.14) रिट-सी संख्या 19800 वर्ष 2018 (श्रीमती लीलावती बनाम राज्य और अन्य)

(क) याचिकाकर्ता विवादित भूमि का मूल भूस्वामी है। धारा 8(3) के तहत नोटिस याचिकाकर्ता को 11.4.1981 को तामील कराया गया था, और याचिकाकर्ता ने 5.5.1981 को आपत्तियां दर्ज कराई थीं, और अंततः धारा 8(4) के तहत 19.6.1981 को एक आदेश पारित किया गया था, लेकिन याचिकाकर्ता ने इसे चुनौती नहीं दी। इस प्रकार, याचिकाकर्ता, हदबंदी के

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



बारे में जानते हुए भी, मई 2018 में वर्तमान रिट याचिका दायर होने तक लगभग 37 वर्षों तक कोई कार्यवाही नहीं की।

(ख) याचिकाकर्ता स्वयं स्वीकार करती है कि विवादित भूमि राजस्व अभिलेखों में राज्य के नाम पर दर्ज है, और याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत खसरा के अवलोकन से भी यह स्पष्ट है। विवादित भूमि पर प्रतिवादियों द्वारा कब्जा किए जाने के दावे के बाद फसलों की खेती करना, विशेषकर तब जब यह स्वीकार किया जाता है कि भूमि राज्य के नाम पर दर्ज है, उपरोक्त कारणों से याचिकाकर्ता के लिए बहुत कम सहायक होगा, और वैसे भी यह तथ्य का एक विवादित प्रश्न होगा।

(ग) याचिकाकर्ता द्वारा कब्जे को दर्शाने के लिए प्रस्तुत तस्वीरें भी उपरोक्त परिच्छेदों में वर्णित कारणों से यह साबित करने में विफल हैं कि वे विवादित भूमि से संबंधित हैं।

(66.15) रिट-सी संख्या 29963 वर्ष 2018 (राम लखन बनाम राज्य और अन्य)

(क) मेवा लाल मूल भूमिधारक थे और यह स्वीकार किया जाता है कि उनके चार पुत्र, बृज लाल, राम लखन (याचिकाकर्ता), जीत लाल और अमृत लाल, उत्तराधिकारी थे। धारा 8(3) के तहत नोटिस 18.7.1979 को मेवा लाल के पुत्र बृज लाल को तामील किया गया था और मेवा लाल ने इसके जवाब में 03.09.1979 को आपत्तियां दर्ज कीं। 18.12.1979 को धारा 8(4) के तहत आदेश पारित होने के बाद, धारा 9 के तहत अंतिम बयान 15.5.1980 को मेवा लाल की बहू श्रीमती रामवती को तामील किया गया। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि मेवा लाल अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही से भलीभांति परिचित थे। इसके अलावा, मेवा लाल के सभी उत्तराधिकारियों ने वर्तमान रिट याचिका में याचिकाकर्ता का साथ नहीं दिया है।

(ख) सक्षम प्राधिकारी के कार्यालय से जारी प्रश्नावली पर भरोसा करना अप्रासंगिक होगा क्योंकि अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही पूरी होने के बाद विवादित भूमि राजस्व अभिलेखों में राज्य के नाम पर दर्ज कर ली गई थी।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(ग) धारा 8(4) के तहत भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने के लगभग 39 वर्ष बाद अगस्त 2018 में वर्तमान रिट याचिका दायर करने का कोई तर्कसंगत स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है, जबकि मूल भूमिधारक मेवा लाल धारा 8 के तहत कार्यवाही से भलीभांति परिचित थे।

(घ) इसके अलावा, याचिकाकर्ता द्वारा विवादित भूमि पर अपने कब्जे को दर्शाने के लिए जिन तस्वीरों पर भरोसा किया गया है, वे भी सहायक नहीं हैं क्योंकि अभिलेखों में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह पता चले कि तस्वीरें संबंधित भूमि से संबंधित हैं, और इसके कारण ऊपर विस्तार से बताए गए हैं।

(66.16) रिट-सी संख्या 34357 वर्ष 2018 (कुंवर भरत सिंह बनाम राज्य)

(क) याचिकाकर्ता के दादा बृज मोहन सिंह मूल भूमिधारक थे और उन्होंने हदबंदी निर्धारण विवरणी दाखिल की थी। याचिकाकर्ता के पिता का निधन बृज मोहन सिंह के जीवनकाल में ही हो गया था। बृज मोहन सिंह के निधन के बाद, विवादित भूमि वर्ष 1985 में याचिकाकर्ता के नाम पर दर्ज हो गई। धारा 8(3) के तहत नोटिस 24.9.1982 को बृज मोहन सिंह के भतीजे जय करण सिंह को तामील कराया गया। धारा 9 के तहत अंतिम बयान भूमिधारक को तामील कराने का प्रयास किया गया, लेकिन उसने अस्वीकार कर दिया। हदबंदी निर्धारण कार्यवाही पूरी होने के बाद, भूमि राजस्व अभिलेखों में राज्य के नाम पर दर्ज की गई और वर्तमान में यह भारत सरकार के रेल मंत्रालय के नाम पर दर्ज है।

(ख) याचिकाकर्ता, दर्ज भूमिधारी होने के बावजूद, अक्टूबर 2018 में वर्तमान रिट याचिका दायर करने तक राजस्व अभिलेखों में राज्य के नाम पर प्रविष्टियों के उत्परिवर्तन पर कभी आपत्ति नहीं जताई। इसके अलावा, वर्तमान रिट याचिका धारा 8(4) के तहत 17.11.1982 को भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने के 36 वर्ष बाद और धारा 10(5) के तहत 01.06.1996 को विवादित भूमि पर स्वैच्छिक कब्जा लेने के 22 वर्ष बाद दायर की गई है। यह आरोप लगाया गया है कि विवादित भूमि अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही समाप्त होने से पहले

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



याचिकाकर्ता के पक्ष में दर्ज की गई थी, लेकिन याचिकाकर्ता यह खुलासा नहीं करता है कि उसे राज्य के नाम पर राजस्व प्रविष्टियों के उत्परिवर्तन के बारे में कब पता चला।

(ग) स्थापित नलकूप के संबंध में बिजली बिलों और तस्वीरों पर याचिकाकर्ता के विवादित भूमि पर कब्जे को दर्शाने के लिए भरोसा किया गया है। बिजली के बिलों में कोई भूखंड संख्या नहीं दिखायी गयी है और इसलिए इन्हें विवादित भूमि से संबंधित नहीं कहा जा सकता है। अभिलेख में ऐसा कोई ठोस सबूत नहीं है जिससे यह साबित हो सके कि कार्यवाही विवादित भूमि से संबंधित है और उपरोक्त कारणों से कब्जे को साबित करने में विफल रही है।

(66.17) रिट-सी संख्या 36216 वर्ष 2019 (मटरू बनाम राज्य और अन्य)

(क) मटरू-याचिकाकर्ता, बंसी लाल के पुत्र, ने विन्देश्वर के पुत्रों खुशरू लाल, गोरे लाल और मानशी के साथ वर्ष 1976 में हदबंदी निर्धारण विवरणी दाखिल की थी। इसके बाद 24.4.1981 को धारा 8(3) के तहत नोटिस जारी किया गया और याचिकाकर्ता को तामील कराया गया। इसके अलावा, कोई आपत्ति दर्ज नहीं की गई। अंततः 21.10.1982 को धारा 8(4) के तहत आदेश पारित किया गया।

(ख) वर्तमान रिट याचिका मई 2018 में धारा 8(4) के तहत 21.10.1982 को भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने की तिथि से लगभग 35 वर्ष और धारा 10(5) के तहत 26.03.1997 को भूमि का स्वैच्छिक कब्जा लेने के 21 वर्ष बाद दायर की गई है। इसके अतिरिक्त, जब याचिकाकर्ता धारा 8(3) के तहत नोटिस की तामील पर विवाद नहीं करता है।

(ग) याचिकाकर्ता ने प्रश्नगत भूमि पर अपने कब्जे को दर्शाने के लिए कुछ राजस्व अभिलेखों और तस्वीरों का सहारा लिया है। हालांकि, याचिकाकर्ता इस तथ्य से इनकार नहीं करता कि विवादित भूमि अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही के अनुसरण में राज्य के नाम पर दर्ज की गई थी। इसके अलावा, अभिलेखों में ऐसा कोई प्रमाण नहीं है जिससे यह सिद्ध हो सके कि तस्वीरें प्रश्नगत भूमि से संबंधित हैं और उपरोक्त कारणों से याचिकाकर्ता को प्रश्नगत भूमि पर अपना कब्जा स्थापित करने में कोई सहायता नहीं मिलेगी।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(66.18) रिट-सी संख्या 36927 वर्ष 2019 (राम चंद्र बनाम राज्य और अन्य)

(क) याचिकाकर्ता राम चंद्र मूल भूमिधारक माइकू लाल का पुत्र है। धारा 8(3) के तहत नोटिस 7.4.1981 को माइकू लाल को व्यक्तिगत रूप से तामील कराया गया था, लेकिन कोई आपत्ति दर्ज नहीं की गई। अंततः 6.10.1981 को धारा 8(4) के तहत आदेश पारित किया गया। इस प्रकार, मूल भूमिधारक माइकू लाल अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही से अवगत थे। याचिकाकर्ता यह भी खुलासा नहीं करते हैं कि उन्हें अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही और राज्य के नाम पर राजस्व प्रविष्टियों के उत्परिवर्तन के बारे में कब पता चला।

(ख) हालांकि, वर्तमान रिट याचिका नवंबर, 2018 में दायर की गई है, जो धारा 8(4) के तहत 6.10.1981 को भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने की तिथि से 38 वर्ष और धारा 10(5) के तहत 14.12.1995 को प्रश्नगत भूमि का स्वैच्छिक कब्जा लेने के लगभग 24 वर्ष बाद है। इसके अलावा, याचिकाकर्ता स्वयं इस तथ्य से इनकार नहीं करते हैं कि प्रश्नगत भूमि का एक हिस्सा राजस्व अभिलेखों में उच्च न्यायालय कॉलोनी के रूप में दर्ज किया गया था और याचिकाकर्ता इस बात से भी इनकार नहीं करते हैं कि वे उक्त भूमि पर कब्जे में नहीं हैं।

(ग) याचिकाकर्ता ने विवादित भूमि पर अपने कब्जे को दर्शाने के लिए कुछ तस्वीरें प्रस्तुत की हैं, लेकिन अभिलेख में ऐसा कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है जिससे यह सिद्ध हो सके कि ये तस्वीरें विवादित भूमि से संबंधित हैं, अतः उपरोक्त कारणों से ये तस्वीरें याचिकाकर्ता के लिए किसी काम की नहीं हैं।

(66.19) रिट याचिका संख्या 13925 वर्ष 2021 (भानु प्रताप बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य)

(क) प्रश्नगत भूमि के मूल भूमिधारी याचिकाकर्ता के दादा राम कुमार थे। राम कुमार का देहांत हो गया और वे अपने पीछे चार पुत्र छोड़ गए, जिनका नाम ईश्वरदास, परमेश्वर, लाला और बुदुलराम है। बाद में परमेश्वर का निधन हो गया और वे अपने पीछे तीन पुत्र रणधीर, बाबूजी और राम सिंह छोड़ गए। राम सिंह का 20.10.2003 को निधन हो गया और वे अपने

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



पीछे तीन पुत्र इंद्रप्रताप, भानु प्रताप (याचिकाकर्ता) और विद्या चरण छोड़ गए। इसके अलावा, वर्तमान रिट याचिका के माध्यम से याचिकाकर्ता ने अधिनियम, 1976 के तहत राम कुमार से संबंधित संपूर्ण अधिशेष भूमि पर अपना दावा स्थापित किया है। याचिकाकर्ता के भाई इंद्रप्रताप और विद्या चरण, जो पिछली रिट याचिका में याचिकाकर्ता के साथ शामिल हुए थे, वर्तमान रिट याचिका में याचिकाकर्ता के साथ शामिल नहीं हुए हैं।

(ख) मूल भूमिधारक की पत्नी को धारा 8(3) के तहत नोटिस 01.09.1984 को तामील कराया गया था, लेकिन कोई आपत्ति दर्ज नहीं की गई। अंततः धारा 8(4) के तहत आदेश 22.9.1984 को पारित किया गया। इस प्रकार याचिकाकर्ता को अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही की कोई व्यक्तिगत जानकारी नहीं है और उसने पहली बार वर्ष 2019 में इस न्यायालय में याचिका दायर की, जबकि भूमि को धारा 8(4) के तहत 22.09.1984 को अधिशेष घोषित किए जाने के लगभग 34 वर्ष और धारा 10(5) के तहत 17.08.1992 को भूमि का स्वैच्छिक कब्जा ग्रहण करने के 26 वर्ष बीत चुके हैं। याचिकाकर्ता ने यह भी खुलासा नहीं किया है कि उसे अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही और राज्य के नाम पर राजस्व प्रविष्टियों के उत्परिवर्तन के बारे में कब पता चला।

(ग) याचिकाकर्ता ने विवादित भूमि पर अपने कब्जे को दर्शाने के लिए बिजली बिलों और तस्वीरों पर भरोसा किया है। इसके अलावा, बिजली बिलों में कोई भूखंड संख्या नहीं है और इन्हें विवादित भूमि से संबंधित नहीं माना जा सकता है। साथ ही, यह साबित करने के लिए अभिलेख में कोई सामग्री नहीं है कि तस्वीरें विवादित भूमि की हैं और इसलिए उपरोक्त विस्तृत कारणों से इन पर भरोसा नहीं किया जा सकता है।

66. इन परिस्थितियों में, याचिकाकर्ताओं द्वारा लंबे समय बाद इस न्यायालय में याचिका दायर करने और विलंब के कारण रिट याचिकाएं वर्जित होने के कारण, हम भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने से इनकार करते हैं और उपरोक्त आधार पर रिट याचिका खारिज की जाती है। हालांकि, यह स्पष्ट किया जाता है

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



कि रिट याचिका की खारिज होने से याचिकाकर्ताओं के एहसान और अन्य (पूर्वोक्त) मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के मददेनजर उचित राहत के लिए सक्षम न्यायालय के समक्ष मुकदमा दायर करने के अधिकार पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा।

(न्यायमूर्ति सुधांशु चौहान) (न्यायमूर्ति सरल श्रीवास्तव)

मार्च 25, 2026

Translated version. Not for legal use.

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।